बोरीस लव्रेन्योव
इकतालिसवाँ

इकतालीसवाँ

लघु उपन्यास

बोरीस लव्रेन्योव

परिकल्पना प्रकाशन
लखनऊ

ISBN: 81-87425-73-3

मूल्य : रु. 20.00

प्रथम संस्करण : जनवरी 2006

परिकल्पना प्रकाशन
द्वारा, जनचेतना, डी-68, निरालानगर,
लखनऊ–226 020 द्वारा प्रकाशित

क्रिएटिव प्रिन्टर्स 628/एस-8, शक्तिनगर, लखनऊ द्वारा मुद्रित

आवरण : रामबाबू

EKTALEESVAAN : *by* ***Boris Lavrenyov***

पुस्तक के बारे में

बोरिस लव्रेन्योव (1891-1959) एक शानदार सोवियत उपन्यासकार थे। उनकी गणना फ़देयेव, फ़ेदिन, अलेक्सेई तोल्स्तोय, शोलोखोव आदि के साथ गोर्की के बाद की पीढ़ी के अग्रणी समाजवादी यथार्थवादी रचनाकारों में की जाती है।

लव्रेन्योव का जन्म काले सागर के तट पर स्थित खेर्सोन नगर में हुआ था। उन्होंने मास्को विश्वविद्यालय के विधि संकाय में शिक्षा प्राप्त की। पहले विश्वयुद्ध में भाग लेते हुए, राष्ट्रीय संकट की लहर के दौरान, उनकी चेतना का क्रान्तिकारीकरण हुआ और अपनी उम्र के बहुतेरे युवा सैनिकों की तरह उन्होंने क्रान्ति का पक्ष चुना। क्रान्ति के बाद गृहयुद्ध के दौरान भी उन्होंने प्रतिक्रान्तिकारियों के विरुद्ध सामरिक मुहिम में हिस्सा लिया।

लव्रेन्योव की पहली साहित्यिक रचना 1924 में प्रकाशित हुई। 1924 में ही उनका यह लघु उपन्यास 'इकतालीसवाँ' भी प्रकाशित हुआ। आज इसकी गणना उन कृतियों में की जाती है जिनके बिना क्लासिकी रूसी सोवियत साहित्य की कल्पना करना असम्भव है। यह महान अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति के बाद जारी गृहयुद्ध में एक स्त्री लाल सैनिक मर्यूत्का के साहसी चरित्र और क्रान्ति के प्रति अडिग प्रतिबद्धता की कहानी प्रस्तुत करती है और साथ ही यह भी दर्शाती है कि क्रान्तिकारी निष्ठा और कठोर कर्त्तव्यपरायणता से लबरेज़ उसके हृदय में प्यार की गहन और सुकोमल भावना भी मौजूद है। मर्यूत्का का प्यार क्रान्ति के प्रति उसकी निष्ठा को रत्तीभर भी कमज़ोर नहीं कर पाता। एक क्रान्तिकारी के चरित्र की सरलता और उदात्तता का यह कृति प्रभावशाली ढंग से चित्रण करती है।

लव्रेन्योव की इस सबसे अधिक प्रभावपूर्ण रचना पर सोवियत संघ में एक फ़िल्म भी बनी थी, जिसे न सिर्फ़ अपने देश में, बल्कि दुनिया के अन्य देशों में भी व्यापक लोकप्रियता मिली थी।

पावेल दूमीत्रियेविच जूकोव को समर्पित

पहला अध्याय

जो केवल इसलिये लिखा गया कि इसके बिना काम नहीं चल सकता था

मशीनगन की गोलियों की अबाध बौछार से उत्तरी दिशा में कज़्ज़ाकों* की चमकती तलवारों का घेरा थोड़ी देर के लिये टूट गया। गुलाबी कमिसार येव्स्युकोव ने अपनी ताकत बटोरी, पूरा ज़ोर लगाया और दनदनाता हुआ उस दरार से बाहर निकल गया।

रेगिस्तानी वीराने में मौत के इस घेरे से जो लोग निकल भागे थे, उनमें गुलाबी येव्स्युकोव, उसके तेईस आदमी और मर्यूत्का शामिल थे।

बाकी एक सौ उन्नीस फ़ौजी और लगभग सभी ऊँट साँप की तरह बल खाये हुए सकलौल के तनों और तामरिस्क की लाल टहनियों के बीच ठण्डी रेत पर निर्जीव निष्प्राण पड़े थे।

क़ज़्ज़ाक अफसर बुरीगा को यह सूचना दी गई कि बचे-बचाये दुश्मन भाग गये है। यह सुनकर उसने भालू के पंजे जैसे हाथ से अपनी घनी मूँछों को ताव दिया और जम्हाई लेते हुए अपना गुफा जैसा मुँह खोल दिया और शब्दों को खींच-खींचकर बड़े इतमीमान से कहा :

"जहन्नुम में जाने दो उन्हें! कोई ज़रूरत नहीं उनका पीछा करने की। बेकार घोड़े थकेंगे। रेगिस्तान खुद ही उनसे निपट लेगा।"

इसी बीच गुलाबी येव्स्युकोव, उसके तेईस आदमी और मर्यूत्का, गीदड़ों की तरह जान छोड़कर असीम मरुस्थल में अधिकाधिक दूर भागते जा रहे थे।

पाठक तो निश्चय ही यह जानने को बेचैन होंगे कि येव्स्युकोव को "गुलाबी" क्यों कहा गया है।

---

* अक्टूबर क्रान्ति के दौरान कज़्ज़ाकों की सेनायें क्रान्ति-विरोधी संघर्ष का मुख्य आधार थीं।

लीजिये, मैं बताता हूँ आपको।

हुआ यह कि कोल्चाक* ने चमकती-नुकीली संगीनों और इंसानी जिस्मों से ओरेनबूर्ग रेलवे-लाइन की नाका बन्दी कर दी। उसने इंजनों को ठप कर दिया और वे साइडलाइनों पर खड़े-खड़े जंग खाने लगे। तब तुर्किस्तानी जनतंत्र में चमड़ा रंगने का काला रंग बिल्कुल खत्म हो गया।

और यह जमाना था बमों-गोलों की धाँय-धाँय, मार-काट और चमड़े की पोशोकों का।

लोग घरेलू आराम की बात भूल चुके थे। उन्हें सामना करना होता था गोलियों की सनसनाहट का, बरखा और चिलचिलाती धूप का, गर्मी और सर्दी का। उन्हें तन ढाँपने के लिये मजबूत पोशाक की ज़रूरत थी।

इसलिये चमड़े पर ही ज़ोर था।

सामान्यतः जाकेटों को नीलगूँ काले रंग से रंगा जाता था। यह रंग उसी तरह पक्का और ज़ोरदार था जैसे कि इसके रंगे चमड़े के कपड़े पहननेवाले।

मगर तुर्किस्तान में इस काला रंग का कहीं नाम-निशान नहीं रह गया था।

इसलिये क्रान्तिकारी हेड-क्वार्टर को जर्मन रासायनिक रंगों के निजी संग्रहों पर अधिकार करना पड़ा। फरगाना घाटी की उज्बेक औरतें इन्हीं रंगों से अपने बारीक रेशम को चमकता-दमकता रंग देती थीं। इन्हीं रंगों से पतले-पतले होंठों वाली तुर्कमान नारियाँ अपने मशहूर तेकिन कालानों पर रंग-बिरंगे बेल-बूटे बनाती थीं।

इन्ही रंगों से अब ताजा चमड़ा रंगा जाने लगा। तुर्किस्तान की लाल फ़ौज में कुछ ही दिनों में गुलाबी, नारंगी, पीला, नीला, आसमानी और हरा यानी इन्द्रधनुष के सभी रंग नज़र आने लगे।

संयोग की बात कि एक चेचकरू सप्लाईमैन ने कमिसार येव्स्युकोव को गुलाबी जाकेट और बिरजिस दे दी।

खुद येव्स्युकोव का चेहरा भी गुलाबी था और उस पर बादामी बुन्दकियाँ थीं। रही सिर की बात तो वहाँ बालों के बजाय कोमल रोयें थे।

हम यह बात भी जोड़ देना चाहते हैं कि कद उसका नाटा था और शरीर भारी-भकरम, बिल्कुल अण्डे की शक्ल जैसा। अब यह कल्पना करना कठिन नहीं होगा कि गुलाबी जाकेट और बिरजस पहने हुए वह चलता-फिरता ईस्टर का

---

* कोल्चाक—जारशाही नौसेना का एडमिरल। साइबेरिया में सोवियत सत्ता के विरुद्ध लड़ाई में सक्रिय भाग लिया।

रंगीन अण्डा प्रतीत होता था।

मगर ईस्टर के अण्डे के समान दिखाई देने वाले येव्स्युकोव की न तो ईस्टर में आस्था थी और न ईसा में विश्वास।

उसे विश्वास था सोवियत में, इण्टरनेशनल, चेका** और उस काले रंग की भारी पिस्तौल पर, जिसे वह अपनी मज़बूत और खुरदरी उँगलियों मे दबाये रहता था।

येव्स्युकोव के साथ तलवारों के जानलेवा चक्र से जो तेईस फ़ौजी भाग निकले थे वे लाल फ़ौज के साधारण फौजियों जैसे फ़ौजी थे, बिल्कुल मामूली लोग।

इन्हीं के साथ ही वह लड़की मर्यूत्का।

मर्यूत्का एकदम यतीम थी। वह मछुओं की एक छोटी-सी बस्ती की रहनेवाली थी। यह बस्ती अस्त्रखान के निकट वोल्गा के चोड़े डेल्टा में स्थित थी और ऊँचे-ऊँचे और घने सरकण्डों के बीच छिपी हुई थी।

सात साल की उम्र से उन्नीस साल की होने तक उसका अधिकतर समय एक बेंच पर बैठ-बैठे बीता था। इस बेंच पर मछलियों की अँतड़ियों के चिकने धब्बे पड़े हुए थे। वह कनवास की सख़्त पतलून पहने हुए इस बेंच पर बैठी-बैठी हेरिंग मछलियों के रुपहले चिकने पेट चीरती रहती थी।

जब यह घोषणा हुई कि सभी शहरों और गाँवों में लाल गार्ड भर्ती किये जा रहे हैं तो मर्यूत्का ने अपनी छुरी बेंच में घोंपी, उठी और कैनवास का वही सख़्त पतलून पहने हुए लाल गार्डों में अपना नाम लिखाने चल दी।

शुरू में तो उसे भगा दिया गया। मगर यह देखते हुए कि वह हर दिन वहाँ हाजिर रहती है, उन लोगों ने जी भरकर हँसने के बाद दूसरों के समान नियमों पर ही उसे भी भर्ती कर लिया। पर उससे यह लिखवा लिया गया कि पूँजी पर श्रम की निर्णायक जीत होने तक वह नारियों के दर्रे के जीवन के निकट तक नहीं जायेगी, बच्चे नहीं जनेगी।

मर्यूत्का बिल्कुल दुबली-पतली थी, नदी तट पर उगने वाले सरकण्डे की तरह। बाल उसके कुछ-कुछ लालिमा लिये हुए थे। वह उन्हें सिर के चारों ओर चोटियाँ करके लपेट लेती और ऊपर से तुर्कमानी भूरी टोपी पहन लेती। उसकी आँखें थीं बादाम जैसी तिरछी, जिनमें पीली-पीली चमक और उद्दण्डता झलकती रहती थी।

मर्यूत्का के जीवन में सबसे मुख्य चीज़ थी—सपने। वह दिन को भी सपने

** क्रान्ति-विरोधियों और तोड़-फोड़ करनेवालों का सामना करने के लिये 1918 में नियुक्त किया गया असाधारण आयोग।

देखा करती। इतना ही नहीं कागज का जो भी छोटा-मोटा टुकड़ा हाथ लग जाता, उसी पर पेंसिल के एक छोटे-से टुकड़े से टेढ़े-मेढ़े अक्षर घसीट कर तुकबन्दी करती।

दस्ते के सभी लोगों को इस बात की जानकारी थी। दस्ता जब कभी किसी ऐसे नगर में पहुँचता, जहाँ से कोई स्थानीय समाचार पत्र निकलता होता तो मर्यूत्का दफ़्तर में जाकर लिखने के कागज माँगती।

वह उत्तेजना से खुश्क हुए अपने होंठों पर ज़बान फेरती और बड़ी मेहनत से अपनी कविताएँ नकल करती। वह हर कविता का शीर्षक लिखती और नीचे अपने हस्ताक्षर करती : कवयित्री मरीया बासोवा।

मर्यूत्का भिन्न-भिन्न विषयों पर कविता रचती। उसकी कवितायें होतीं क्रान्ति के बारे में, संघर्ष और नेताओं से सम्बन्ध में, जिनमें लेनिन भी शामिल थे।

हम मज़दूर-किसानों के नेता हैं लेनिन
उनकी मूर्ति सजा देंगे हम चौक में,
सुख-आराम, महल सब ठुकरायें
जो श्रम-संघर्षों से जूझे, उनसे हाथ मिलायें।

वह समाचारपत्र के कार्यालय में अपनी कविताएँ लेकर पहुँचती। सम्पादकगण चमड़े की जाकेट पहने और कन्धे पर बन्दूक उठाये हुए इस दुबली-पतली छोकरी को देखकर आश्चर्यचकित होते, उससे कविताएँ लेते और पढ़ने का वचन देते।

सभी को इत्मीनान की नज़र से देखती हुई मर्यूत्का बाहर चली जाती।

सम्पादकमण्डल का सेक्रेट्री ये कविताएँ बड़े चाव से पढ़ता। फिर क्या होता कि कन्धे उसके ऊपर को उठ जाते, काँपने लगते और जब हँसी रोके न रुकती तो उसकी सूरत अजीब-सी हो जाती। तब उसके सहयोगी इर्द-गिर्द जमा हो जाते और ठहाकों की गूँज के बीच सेक्रेट्री कविताएँ पढ़कर सुनाता।

खिड़कियों के दासों पर बैठे सेक्रेट्री के सहयोगी लोटपोट हो जाते; उस जमाने में कार्यालय में फर्नीचर नहीं होता था।

अगली सुबह को मर्यूत्का वहाँ फिर उपस्थित होती। वह सेक्रेट्री से हँसी के कारण हिलते-काँपते चेहरे को बहुत ध्यान से देखती, अपने कागज समेटती और गुनगुनाती आवाज़ में कहती :

"मतलब यह कि छापी नहीं जा सकतीं? कच्ची हैं? मैं तो इन्हें रचती हूँ अपना दिल काट-काटकर, बिल्कुल कुल्हाड़ी चला-चलाकर, मगर बात फिर भी

बनती नहीं। खैर, मैं और कोशिश करूँगी—क्या किया जाये! न जाने ये इतनी मुश्किल क्यों है? मछली का हैजा!"

अपनी तुर्कमानी टोपी को माथे पर खींचती हुई और कन्धे झटककर वह बाहर चली जाती।

मर्यूत्का से कविता तो ऐसी-वैसी ही बन पाती, मगर उसका बन्दूक का निशाना बिल्कुल अचूक बैठता। अपने दस्ते में उसकी निशानेबाजी का जवाब नहीं था। लड़ाई के समय वह हमेशा गुलाबी कमिसार के निकट रहती।

येव्स्युकोव उँगली का इशारा करके कहता :

"मर्यूत्का! वह देख! वह रहा अफसर!"

मर्यूत्का उधर नज़र घुमाती, होंठों पर ज़बान फेरती और इत्मीनान से बन्दूक ऊपर उठाती। धड़ाका होता, निशाना कभी खाली न जाता।

वह बन्दूक नीचे करती और हर गोली दागने के बाद गिनती करती हुई कहती :

"उनतालीस, मछली का हैजा! चालीस, मछली का हैजा!"

"मछली का हैजा"—यह मर्यूत्का का तकिया-कलाम था।

माँ-बहन की गन्दी गालियाँ उसे पसन्द न थीं। लोग जब उसकी उपस्थिति में गालियाँ देते तो उसके माथे पर बल पड़ जाते, वह चुप रहती और उसका चेहरा तमतमा उठता।

मर्यूत्का ने भर्ती होते समय सैनिक कार्यालय में जो वचन दिया था, वह उसका कड़ाई से पालन कर रही थी। पूरे दस्ते में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो मर्यूत्का का प्यार पा जाने की डींग हाँक सकता।

एक रात यह घटना घटी। गूचा नाम का हंगेरियायी, जो अभी-अभी दस्ते में आया था, कुछ दिनों से मर्यूत्का की और ललचाई नज़रों से देखता रहा था। एक रात वह वहाँ पहुँच गया, जहाँ मर्यूत्का सो रही थी। उसके साथ बहुत बुरी बीती। हंगेरियाई जब रेंगता हुआ लौटा तो उसके तीन दाँत ग़ायब थे और माथे पर एक गुमटे की वृद्धि हो गई थी। पिस्तौल के दस्ते से मर्यूत्का ने उसकी खबर ली थी।

सिपाही मर्यूत्का से तरह-तरह के हँसी-मज़ाक करते, मगर लड़ाई के समय अपनी जान से कहीं अधिक उसकी जान की चिन्ता करते।

यह प्रमाण था अस्पष्ट कोमल भावना का, जो उनकी सख़्त और रंग-बिरंगी जाकेटों के नीचे उनके हृदयों की गहराई में कहीं छिपी बैठी थी। यह प्रमाण था गर्म और सुखद शरीरवाली पत्नियों की विरह-पीड़ा का, जिन्हें वे घर पर छोड़

आये थे।

हाँ तो ऐसे थे ये लोग--गुलाबी येव्स्युकोव, मर्यूत्का और तेईस सिपाही, जो ओर-छोरहीन मरुस्थल की ठण्डी रेत पर भाग निकले थे।

ये दिन थे फरवरी के, जब मौसम अपनी तूफ़ानी तानें छेड़ देता है। रेत के टीलों के बीचवाली गुफाओं में फूली-फूली बर्फ़ का कालीन बिछ चुका था। तूफ़ान और अँधेरे में चलते जाने वाले इन लोगों के ऊपर का आकाश गूँजता रहता, या तो चिल्लाती हवाओं से या हवा को चीर जानेवाली दुश्मन की गोलियों से।

सफ़र जारी रखना बहुत कठिन था। फटेहाल जूते रेत और बर्फ़ में गहरे धँस-धँस जाते थे। भूखे खुरदरे ऊँट बिलबिलाते, हुँकारते और मुँह से झाग निकालते।

तेज हवाओं के कारण सूखी झीलों पर नमक के कण चमक उठते। क्षितिज की रेखा सभी ओर सैकड़ों मीलों तक आकाश को पृथ्वी से अलग करती नज़र आती। यह रेखा ऐसी स्पष्ट और समान थी मानो चाकू से काटकर बनाई गई हो।

सच बात तो यह है की मेरी इस कहानी में इस अध्याय की बिल्कुल ज़रूरत नहीं थी।

अच्छा तो यही होता कि मैं सीधे-सीधे मुख्य बात की चर्चा करता, उसी विषय से शुरू करता, जिसका आगे चलकर उल्लेख किया गया है।

मगर अन्य बहुत-सी बातों के अलावा पाठक को यह जानने की भी ज़रूरत है कि गूर्येव के विशेष दस्ते का जो भाग जैसे-तैसे करा-कूदुक कुएँ से सैंतिस किलोमीटर उत्तर-पश्चिम में पहुँच गया था, वह कहाँ से आया था, क्यों उसमें एक लड़की थी और किस कारण कमिसार येव्स्युकोव को "गुलाबी" कहा जाता था।

और इसीलिये मैंने यह अध्याय लिखा।

हाँ, मगर मैं आपको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि इसका कोई महत्व नहीं हैं।

दूसरा अध्याय

जिसमें क्षितिज पर

एक काला धब्बा-सा दिखाई देता है.....

निकट से देखने पर पता चलता है कि वह

सफ़ेद गार्ड का लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक है

जान-गेलदी कुएँ से साई-कूदुक कुंए तक सत्तर किलोमीटर और वहाँ से उश्कान नामक चश्मे तक बासठ किलोमीटर का फासला और था।

रात का सकसौल के तने पर बन्दूक का दस्ता मारते हुए येव्स्युकोव ने ठिठुरी हुइ आवाज़ में कहा :

"ठहर जाओ, रात को यहीं पड़ाव होगा।"

सकसौल की टहनियाँ इकट्ठी करके इन लोगों ने आग जलाई। बल खाते हुए काले शोले उठने लगे और आग के चारों ओर नमी का काला-सा घेरा दिखाई देने लगा।

फौजियों ने अपने थैलों से चावल और चर्बी निकाली। लोहे के बड़े-से पतीले में ये दोनों चीजें उबलने लगी और भेड़ की चर्बी की तेज गन्ध फैलनी शुरू हुई।

ये लोग आग के इर्द-गिर्द गड्ड-मड्ड हुए पड़े थे। सभी चुप्पी साधे थे और इनके दाँत बज रहे थे। वे तन चीरती हुई हवा के ठण्डे झोंकों से अपने शरीरों को बचाने का प्रयत्न कर रहे थे। पैर गर्माने के लिये वे उन्हें आग में घुसेड़े दे रहे थे। उनके बूटों का सख़्त चमड़ा चटक रहा था।

बर्फ़ की सफ़ेद धुंध में बँधे ऊँटों की घण्टियों की उदास टनटनाहट गूँज रही थी।

येव्स्युकोव ने काँपती उँगलियों से सिगरेट लपेटी।

धुएँ का बादल उड़ाते हुए उसने कठिनाई से कहा :

"साथियो, अब यह तय करना है कि हम कहाँ जायेंगे।"

"हम जा,ही कहाँ सकते हैं," आग के दूसरी ओर से एक मरी-सी आवाज़ सुनाई दी, "हर हालत में अन्त तो एक ही है--मौत। गूर्येव लौटना सम्भव नहीं--खून के प्यासे क़ज्ज़ाक वहाँ मौजूद हैं और गूर्येव के सिवा कोई ऐसी जगह ही नहीं जहाँ जाना सम्भव हो?"

"खीवा के सम्बन्ध में क्या विचार है?"

"छि! सख़्त जाड़े में करा-कुम के पास छः सौ किलोमीटर कैसे जाया जायेगा? खायेंगे क्या? क्या पतलूनों में जुएँ पालकर खायेंगे?"

ज़ोर का ठहाका गूँजा। उसी मुर्दा आवाज़ में निराशा से भरे ये शब्द सुनाई दिये :

"एक ही अन्त है हमारा—मौत!"

गुलाबी वर्दी के नीचे येव्स्युकोव का दिल बैठ गया। मगर उसने अपनी यह हालत जाहिर नहीं होने दी। उसने कड़कती आवाज़ में कहा :

"तुम कायर! औरों को मत डराओ! मरना तो हर बेवक़ूफ़ जानता है। ज़रूरत है अक्ल से काम लेने की जिससे कि मर न जायें।"

"अलेक्सान्द्रोव्स्की किले में जाया जा सकता है। वहाँ हमारे ही भाई, यानी मछुए रहते हैं।"

"ऐसा करना ठीक नहीं होगा," येव्स्युकोव ने बात काटी, "मुझे सूचना मिल चुकी है देनीकिन* ने अपनी फ़ौज वहाँ उतार दी है। क्रस्नोवोदस्की और अलेक्सान्द्रोव्स्की पर सफ़ेद फ़ौज का अधिकार है।"

कोई नींद में कराह उठा।

येव्स्युकोव ने आग से गर्म हुए अपने घुटने पर ज़ोर से हाथ मारा। फिर कड़कती हुई आवाज़ में कहा :

"बस! एक ही रास्ता है, साथियो, अराल सागर की ओर! जैसे-तैसे अराल पहुँचेंगे, वहाँ सागर तट के खानाबदोश किर्गिजों के पास जाकर कुछ खायें-पियेंगे और फिर अराल का चक्कर काटकर कजालीन्स्क की ओर बढ़ेंगे। कजालीन्स्क में हमारा हेड-क्वार्टर है। वहाँ जाना तो जैसे अपने घर जाना है।"

उसने ज़ोरदार आवाज़ में यह कहा और चुप हो गया। उसे खुद भी इस बात का विश्वास नहीं था कि वे अराल सागर तक पहुँच जायेंगे।

येव्स्युकोव के निकट लेटे हुए व्यक्ति ने सिर ऊपर उठाया और पूछा :

"मगर अराल तक खायेंगे क्या?"

येव्स्युकोव ने फिर ज़ोरदार आवाज़ में जवाब दिया :

"कमर कसनी पड़ेगी। राजकुमार तो हम हैं नहीं! तुम तो चाहते हो मजेदार मछली और मधु! मगर इनके बिना ही काम चलाना पड़ेगा। अभी तो चावल भी हैं, थोड़ा आटा भी है।"

"तीन दिन से अधिक नहीं चलेंगे!"

* जारशाही जनरल, गृहयुद्ध के दौरान दक्षिणी रूस में सोवियत-विरोधी सेनाओं का प्रधान सेनापति।

"तो क्या हुआ चेरनीश खलीज तक पहुँचने में दस दिन लगेंगे। हमारे पास छः ऊँट हैं। रसद खत्म होते ही ऊँटों को काटना शुरू करेंगे। वैसे भी अब इनसे कोई लाभ नहीं। एक ऊँट को काटेंगे और दूसरे पर मांस लादकर आगे चल देंगे। बस इसी तरह मंजिल तक पहुँचेंगे।"

खामोशी छा गई। मर्यूत्का आग के करीब लेटी हुई थी। सिर को हाथों से थामे वह अपनी बिल्ली जैसी आँखों से शोलों को एकटक ताके जा रही थी। येव्स्युकोव को अचानक बेचैनी-सी अनुभव हुई।

वह उठकर खड़ा हुआ और उसने अपनी जाकेट से बर्फ़ झाड़ी।

"बस! मेरा आदेश है—पौ फटते ही अपनी राह चल दो। बहुत सम्भव है हम सभी न पहुँच पायें," कमिसार की आवाज़ चौकन्नी हुई चिड़िया की भाँति ऊँची हो गई, "मगर जाना तो हमें होगा ही... यह क्रान्ति का सवाल है साथियो... सारी दुनिया के श्रमजीवियों के लिये!"

कमिसार ने बारी-बारी से तेईस के तेईस फौजियों की आँखों में झाँककर देखा। वह साल भर से उनकी आँखों में जिस चमक को देखने का अभ्यस्त हो गया था, वह आज गायब थी। उनकी आँखों में उदासी थी, हताशा थी। उनकी झुकी-झुकी पलकों के नीचे निराशा और अविश्वास की झलक थी।

"पहले ऊँटों को, फिर एक दूसरे को खायेंगे," किसी ने कहा।

फिर खामोशी छा गई।

येव्स्युकोव अचानक औरत की भाँति चीख उठा :

"बक-बक बन्द करो! क्रान्ति के प्रति अपना कर्तव्य भूल गये क्या? बस खामोश! हुक्म हुक्म है! नहीं मानोगे तो गोली से उड़ा दिये जाओगे!"

वह खाँसकर बैठ गया।

वह आदमी जो बन्दूक के गज से चावल हिला रहा था अप्रत्याशित ही बड़ी ज़िन्दादिली से कह उठा :

"नाक क्यों सुड़कते जा रहे हो? पेट में चावल भरो! बेकार ही क्या पकाये हैं मैंने! फ़ौजी कहते हो अपने को, जुएँ हो जुएँ!"

उन्होंने चमचों से फूले-फूले और चिकने-चिकने चावलों के गोले निकाले। इस कोशिश में कि वे ठण्डे न हो जायें उन्होंने चावलों को जल्दी से निगलकर अपने गले जला लिये। फिर भी मोम के समान ठण्डी चर्बी की मोटी सफ़ेद तह उनके होंठों पर जमी रह जाती थी।

आग ठण्डी पड़ती जा रही थी। रात की काली पृष्ठ-भूमि में नारंगी रंग की

चिंगारियों की बौछार हो रही थी। लोग एक दूसरे के अधिक निकट आ गये, ऊँघे, खर्राटे लेने लगे और फिर नींद में कराहने और बड़बड़ाने लगे।

मुँह अँधेरे ही किसी ने कन्धा हिलाकर येव्स्युकोव को जगाया। अपनी चिपकी हुई पलकों को उसने बड़ी मुश्किल से खोला। वह उठकर बैठ गया और अभ्यासवश बन्दूक की तरफ़ हाथ बढ़ा दिया।

"ठहरो!"

मर्यूत्का उसके ऊपर झुकी हुई थी। आँधी के नीलगूं भूरेपन में उसकी बिल्ली जैसी आँखें चमक रही थीं।

"क्या बात है?"

"साथी कमिसार उठो! मगर चुपचाप! जब आप लोग सो रहे थे तब मैं ऊँट पर सवार होकर निकली। जान-गेलदी से एक किर्गिज कारवाँ आ रहा है।"

येव्स्युकोव ने दूसरी ओर करवट ली। उसने आश्चर्यचकित होते हुए पूछा : "कैसा कारवाँ? क्यों झूठ बोल रही हो?"

"बिल्कुल सच... मछली का हैजा, बिल्कुल सच! कोई चालीस ऊँट हैं।"

येव्स्युकोव उछलकर खड़ा हुआ और उसने उँगलियाँ मुँह में डालकर सीटी बजाई। तेईस फौजियों के लिये उठना और अपने ठिठुरे हुए हाथ-पाँव सीधे करना दूभर हो रहा था। पर जैसे ही उन्होंने कारवाँ का नाम सुना उनकी जान में जान आ गई।

बाईस फ़ौजी उठे। तेईसवाँ जहाँ का तहाँ लेटा रहा। वह घोड़े की झूल ओढ़कर लेटा हुआ था और उसका सारा बदन काँप रहा था।

"ज़ोरों का बुखार," फ़ौजी ने कालर के अन्दर उँगली से उसके तन को छूकर मर्यूत्का ने विश्वास के साथ कहा।

"ओह यह तो बुरा हुआ! पर किया ही क्या जा सकता है? इसे नमदे ओढ़ा दो और लेटा रहने दो। वापस आकर इसे सम्भाल लेंगे। हाँ तो किधर है कारवाँ?"

मर्यूत्का ने हाथ से पश्चिम की ओर संकेत किया।

"बहुत दूर नहीं! कोई छः किलोमीटर होगा। ऊँटों पर बहुत बड़े-बड़े बण्डल लदे हैं!"

"अरे, अब सूरत निकल आई जीने की! बस उन्हें हाथ से निकलने नहीं देना चाहिये। जैसे ही कारवाँ नज़र आये चारों ओर से घेर लो। दौड़-धूप की कुछ परवाह न करो। कुछ बायें, कुछ दायें से—बस चल दो!"

उन्होंने एक ही पंक्ति में रेत के टीलों के बीच से चलना शुरू किया। वे

झुककर दोहरे हुए जा रहे थे, मगर उनमें जोश था और तेज चाल से उनके शरीरों में गर्मी पैदा हो रही थी।

एक टीले की चोटी से उन्हें मेज की तरह समतल मैदान में ऊँटों की एक कतार दिखाई दी।

ऊँट अपने बण्डलों के बोझ से दबे जा रहे थे।

"भगवान ने भेज दिया! बड़ी कृपा उसकी!" ग्वोज्योव नाम के एक चेचकरू फ़ौजी ने फुसफुसाकर कहा।

येव्स्युकोव चुप न रह सका और बिगड़ते हुए कह उठा।

"भगवान ने? कितनी बार तुम्हें बताया जा चुका है कि भगवान नाम की कोई चीज़ नहीं। हर चीज़ का एक भौतिक नियम है।"

मगर यह वाद-विवाद का समय नहीं था। हुक्म के मुताबिक सभी फ़ौजी रेत के हर ढेर, झाड़ियों के हर झुरमुट का उपयोग करते हुए तेजी से झपट चले। वे अपनी बन्दूकों को ऐसे कसकर थामे हुए थे कि उनकी उँगलियों में दर्द होने लगा था। कारवाँ हाथ से निकल जाये, नहीं, ऐसा तो हरगिज नहीं होने दिया जा सकता था। इन्हीं ऊँटों के साथ तो उनकी आशायें थीं, वे ही तो उनके प्राण थे, उनके बचाव के साधन थे।

कारवाँ झूमता-झामता और मस्ती में चला आ रहा था। ऊँटों की पीठों पर लदे हुए रंगीन नमदे अब नज़र आने लगे थे। ऊँटों के साथ-साथ गर्म लबादे और भेड़ियों की खाल के टोप पहने किर्गिज चल रहे थे।।

अचानक येव्स्युकोव की गुलाबी वर्दी एक टीले पर उभरी। वह बन्दूक ताने था। उसने चिल्लाकर कहा :

"जहाँ के तहाँ रुक जाओ! अगर बन्दूकें हैं तो ज़मीन पर फेंक दो! कोई तमाशा नहीं करो, वरना सभी भून दिये जाओगे।"

येव्स्युकोव अभी अपनी बात पूरी भी न कर पाया था कि डरे-सहमे हुए किर्गिज रेत पर गिर पड़े।

तेजी से दौड़ने के कारण हाँफते हुए सैनिक सभी ओर से कारवाँ की तरफ़ लपके।

"जवानो, ऊँट पकड़ लो!" येव्स्युकोव चिल्लाया।

मगर येव्स्युकोव की आवाज़ कारवाँ की तरफ़ से आनेवाली गोलियों की एक सधी हुई और ज़ोरदार बौछार में डूब गई। सनसनाती हुई गोलियाँ पिल्लों की तरह भौंक रही थीं। येव्स्युकोव की बगल में ही कोई हाथ फैलाकर रेत पर गिरा।

"लेट जाओ! अक्ल ठिकाने कर दो इन शैतानों की!" टीले की ओट में होते हुए येव्स्युकोव ने चिल्लाकर कहा। गोलियाँ अधिक तेजी से आने लगीं।

ज़मीन पर बिठा दिये गये ऊटों के पीछे से गोलियाँ आ रही थीं। गोलियाँ चलानेवाले नज़र नहीं आ रहे थे।

गोलियाँ सीधी निशाने पर आ रही थीं। किर्गिज ऐसे अच्छे निशानेबाज नहीं होते, इसलिये यह उनका काम नहीं था।

लाल फ़ौज के लेटे हुए जवानों के चारों ओर रेत पर गोलियाँ बरस रही थीं।

मरुस्थल गूँज रहा था। मगर धीर-धीरे कारवाँ की ओर से गोलियाँ आनी बन्द हो गईं।

लाल फ़ौज के सिपाही छिप-छिपकर और झपटते हुए आगे बढने लगे।

जब कोई तीस कदम का फासला रह गया तो येव्स्युकोव को ऊँट के पीछे फर की टोपी के ऊपर सफ़ेद कन्टोपवाला सिर दिखाई दिया। फिर कन्धों पर सुनहरी फीतियाँ भी नज़र आईं।

"मर्यूत्का! वह देख! अफसर!" येव्स्युकोव ने अपने पीछे रेंगकर आती हुई मर्यूत्का की ओर गर्दन घुमाकर कहा।

"देख रही हूँ।"

उसने इतमीनान से निशाना बाँधा और गोली चलाई। शायद इसलिये कि मर्यूत्का की उँगलियाँ बिल्कुल ठिठुरी पड़ी थीं, या इसलिये कि उत्तेजना और दौड़-धूप के कारण काँप रही थीं, उसका निशाना चूक गया। उसने अभी "इकतालीसवाँ', मछली का हैजा!" कहा ही था कि ऊँट के पीछे से सफ़ेद कनटोप और नीले कोटवाला व्यक्ति उठकर खड़ा हो गया और उसने अपनी बन्दूक ऊँची उठाई। बन्दूक की संगीन के साथ सफ़ेद रूमाल लहरा रहा था।

मर्यूत्का ने अपनी बन्दूक रेत पर फेंक दी और फूट-फूट कर रो पड़ी। वह अपने गन्दे और हवा से झुलसे हुए चेहरे पर आँसू मलती जा रही थी।

येव्स्युकोव अफसर की ओर दौड़ा। लाल फ़ौज का एक सिपाही येव्स्युकोव से भी आगे निकल गया और दौड़ते हुए उसने अपनी संगीन भी सीधी कर ली थी ताकि अफसर की छाती पर ज़ोर से प्रहार कर सके।

"मारना नहीं! ज़िन्दा पकड़ लो," कमिसार चिल्लाया।

नीले कोटवाले को पकड़कर ज़मीन पर गिरा दिया गया।

अफसर के पाँच अन्य साथी ऊँटों के पीछे सीसे से कटे पड़े थे।

लाल सेना के सैनिकों ने हँसते और गालियाँ देते हुए ऊँटों की नकेलें पकड़ीं

और उन्हें दलों में बाँध दिया।

किर्गिज येव्स्युकोव के पीछे-पीछे हो लिये और उसकी जाकेट को पकड़कर मिन्नत-समाजत करने और गिड़गिड़ाने लगे। उनकी आँखें दया की याचना कर रही थीं और वे तिरछी नज़र से उसके चेहरे को देख रहे थे।

कमिसार ने उन्हें झटककर दूर किया, उनसे दूर भागा, उन्हें डाँटा-डपटा। खुद दयाद्रवित होते हुए नाक-भौं सिकोड़कर उनकी चपटी नाकों और नुकीली गाल की हड्डियों में पिस्तौल की नली घुसेड़ी।

"रुको, दूर रहो! मिन्नत-समाजत करना बन्द करो!"

सफ़ेद दाढ़ीवाले एक बुजुर्ग किर्गिज ने, जो औरों की तुलना में अधिक अच्छे कपड़े पहने था, येव्स्युकोव की पेटी पकड़ ली। उसने फुसफुसाते और गिड़गिड़ाते हुए जल्दी-जल्दी और टूटी-फूटी रूसी में कहा :

"अरे जनाब... बहुत बुरा किया आपने... ऊँट तो किर्गिज की जान होता है। ऊँट गया तो किर्गिज की जान गई... अरे सरकार, ऐसा जुल्म नहीं करें। रकम चाहिये–यह हाजिर है। चाँदी के सिक्के, जार के सिक्के, कागजी नोट... हुक्म कीजिये कितना चाहिये! ऊँट लौटा दीजिये!"

"अरे मूर्ख, यह क्यों नहीं समझता कि ऊँटों के बिना इस वक्त हम भी मौत के मुँह में पहुँच जायेंगे। मैं इन्हें चुराकर थोड़े ही लिये जा रहा हूँ, क्रान्ति के लिये इनकी आवश्यकता है, अस्थाई रूप से। तुम तो यहाँ से पैदल भी अपने घर पहुँच जाओगे, मगर हमें तो मौत का सामना करना होगा।"

"अरे सरकार, बहुत बुरा कर रहे हैं,। ऊँट लौटा दीजिये। माल ले लीजिये, रकम ले लीजिये," किर्गिज गिड़गिड़ाया।

येव्स्युकोव निजात पाया।

"कह दिया और बस! बक-बक बन्द करो। यह लो रसीद और चलते-फिरते नज़र आओ!"

उसने अख़बार के एक टुकड़े पर रसीद लिखकर किर्गिज को दी।

किर्गिज ने यह रसीद रेत पर फेंक दी, ज़मीन पर गिर पड़ा और हाथों से मुँह ढाँपकर रोने लगा।

बाकी किर्गिज चुपचाप खड़े थे। उनकी तिरछी काली आँखों में बेजान आँसू काँप रहे थे।

येव्स्युकोव घूमा। उसे बन्दी बनाये गये अफसर का ध्यान आया।

वह दो फौजियों के बीच खड़ा था। उसका चेहरा शान्त था। वह ऊँचे स्वीडिश

फेल्ट बूट पहने था और दायाँ पाँव आगे को किये हुए शान से खड़ा था। वह सिगरेट पीता हुआ कमिसार को तिरस्कार की दृष्टि से देख रहा था।

"कौन हो तुम?" येव्स्युकोव ने पूछा।

"सफ़ेद गार्ड का लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक। और तुम कौन हो?" अफसर ने धुएँ का बादल उड़ाते हुए जवाब में पूछा।

और उसने अपना सिर ऊपर उठाया।

उसके सिर ऊपर उठाने पर लाल फ़ौज के सिपाहियों और येव्स्युकोव ने जब उसकी आँखें देखीं तो दंग रह गये। उसकी आँखें थीं एकदम नीली-नीली। ऐसा लगता था मानो साबुन के झाग के बीच बढ़िया फ्रांसीसी नील के दो गोले तैर रहे हों।

तीसरा अध्याय

जिसमें ऊँटों के बिना
मध्य एशिया के रेगिस्तान में यात्रा की
कठिनाइयों का उल्लेख किया गया है और
कोलम्बस के सहयात्रियों के अनुभव का
हवाला दिया गया है

मर्यूत्का की सूची में गार्ड के लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक को इकतालिसवाँ होना चाहिये था।

मगर या तो ठण्ड के कारण या उत्तेजित होने की वजह से मर्यूत्का का निशाना चूक गया था।

इस तरह जीवित लोगों की सूची में यह लेफ़्टीनेण्ट एक अतिरिक्त संख्या था।

येव्स्युकोव के आदेशानुसार लेफ़्टीनेण्ट की तलाशी ली गई। उसकी खूबसूरत जाकेट की पीठ में एक गुप्त जेब मिली।

लाल फ़ौज के आदमियों ने जब यह जेब खोज निकाली तो लेफ़्टीनेण्ट एक वहशी घोड़े की तरह उछला-कूदा। मगर उसे कसकर काबू में रखा गया। उसके काँपते हुए होंठ और चेहरे का उड़ा हुआ रंग ही उसकी उत्तेजना और परेशानी को व्यक्त कर रहा था।

येव्स्युकोव ने बहुत सावधानी से पैकेट खोला और उसके भीतर रखी हुई दस्तावेज को बहुत ध्यान से पढ़ा। उसने सिर हिलाया और सोच में डूब गया।

दस्तावेज में लिखा था कि रूस के सर्वोच्च शासक एडमिरल कोल्चाक ने गार्ड के लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक, वदीम निकोलायेविच, को जनरल देनीकिन की ट्राँसकास्पियन सरकार के सम्मुख अपनी ओर से प्रतिनिधित्व करने का उत्तरदायित्व सौंपा है।

पत्र में यह संकेत भी था कि लेफ़्टीनेण्ट को कुछ गुप्त बातें भी बताई गई हैं, जो वह जनरल द्रत्सेन्को को ज़बानी बतायेगा।

येव्स्युकोव ने बड़ी सावधानी से पैकेट को लपेटकर अपनी जाकेट की भीतरवाली जेब में रखा और लेफ़्टीनेण्ट से पूछा :

"हाँ तो, अफसर साहब, क्या हैं आपकी गुप्त बातें? कुछ छिपाये बिना सब कुछ साफ़-साफ़ बता देने में ही आपकी भलाई है। आप अब लाल फ़ौज के सिपाहियों के कैदी हैं और मैं उनका कमाण्डर अर्सेन्ती येव्स्युकोव हूँ।"

लेफ़्टीनेण्ट की चटक नीली गोलियाँ येव्स्युकोव की ओर उठीं।

वह मुस्कराया और खटाक से अपनी एड़ियाँ बजाईं।

"बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर, श्रीमान येव्स्युकोव! अफ़सोस की बात है कि मेरी सरकार ने आप जैसे शानदार हस्ती से कूटनीतिक बातचीत करने का अधिकार मुझे नहीं दिया है।"

येव्स्युकोव के बुन्दियों वाले चेहरे का रंग उड़ गया। पूरे दस्ते के सामने यह लेफ़्टीनेण्ट उसका मज़ाक उड़ा रहा था।

कमिसार ने पिस्तौल निकाल ली।

"सफ़ेद हरामी! बातें न बना! सीधे-सीधे सब कुछ बता दे, वरना गोली तेरे आर-पार हो जायेगी!"

लेफ़्टीनेण्ट ने कन्धे झटके।

"तुम कमिसार तो हो, लेकिन मूर्ख भी हो। यदि मार डालोगे तब तो कुछ भी हाथ-पल्ले नहीं पड़ेगा!"

कमिसार ने भला-बुरा कहते हुए पिस्तौल नीची कर ली।

"मैं तुझे छठी का दूध याद करा दूँगा, कुत्ते के पिल्ले! मैं तुझे बुलवाकर ही छोड़ूँगा!" वह बड़बड़ाया।

लेफ़्टीनेण्ट पहले की भाँति ही होंठ के एक सिरे से मुस्कराता रहा।

येव्स्युकोव ने थूका और वहाँ से हट गया।

"क्यों साथी कमिसार, भेज दें इसे स्वर्ग में?" एक सिपाही ने पूछा।

कमिसार ने नाखून से अपनी नाक खुजायी।

"नहीं... इससे काम नहीं चलेगा। वह सख़्त जान है, बहुत सख़्त। इसे जैसे-तैसे कज़ालीन्स्क पहुँचाना होगा। वहाँ हेड-क्वार्टर में वे इससे सब कुछ उगलवा लेंगे।"

"इसको कहाँ साथ-साथ लिये फिरेंगे! खुद ही तो पहुँच जायें?"

"क्या सफ़ेद अफसरों की भर्ती शुरू कर दी अब?"

येव्स्युकोव तुनककर बोला :

"तुम्हें मतलब? मैं साथ ले चल रहा हूँ, मैं ही जिम्मेदार हूँ। बस, खत्म!"

जब घूमा तो मर्यूत्का पर नज़र पड़ी।

"सुनो मर्यूत्का! यह अफसर तुम्हारी देखरेख में रहेगा। अपनी आँखें खुली

रखना। अगर यह भाग गया तो तुम्हारी खाल खींच लूँगा!"

मर्यूत्का ने चुपचाप बन्दूक कन्धे पर रख ली। वह बन्दी के पास गई।

"इधर आओ तो! मेरी निगरानी में रहोगे। मगर इस भुलावे में मत रहना कि मैं औरत हूँ, इसलिये निकल भागोगे। तुम्हारे भागने पर मैं तीन सौ गज की दूरी से भी तुम्हें गोली मार सकती हूँ। एक बार निशाना चूक गया, दोबारा ऐसा नहीं होने का, मछली का हैजा!"

लेफ़्टीनेण्ट ने कनखियों से मर्यूत्का को देखा। हँसी के मारे उसके कन्धे हिल रहे थे। उसने शिष्टता से सिर झुकाकर कहा :

"ऐसी सुन्दरी का बन्दी होना मेरे लिये गर्व की बात है।"

"क्या? क्या बक रहे हो?" उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते हुए मर्यूत्का ने पूछा। "बदमाश! माज़ूरका नाच नाचने के सिवा शायद कुछ भी नहीं जानते? बेकार बक-बक मत करो! ज़बान बन्द और चलो!"

उन्होंने एक छोटी-सी झील के किनारे रात बिताई।

बर्फ़ की तह के नीचे खारे पानी में से आयोडीन और गलने-सड़ने की गन्ध आ रही थी।

ये लोग खूब ही मजे की नींद सोये। किर्गिज़ों के ऊँटों से उन्होंने कालीन और नमदे उतारकर अपने चारों ओर लपेट लिये थे। मुर्दों की तरह सोये।

रात के वक्त मर्यूत्का ने रस्सी से गार्ड के लेफ़्टीनेण्ट के हाथ-पैर कसकर बाँध दिये, रस्सी को उसकी कमर के गिर्द लपेटकर उसके दूसरे सिरे को अपने हाथ पर बाँध लिया।

सिपाहियों ने जी भरकर मज़ाक उड़ाया। फूली-फूली आँखों वाला सेम्यान्नी चिल्लाया :

"अरे भाइयो, मर्यूत्का ने अपने प्रेमी को जादू की डोर से बाँध लिया है। अब उसे ऐसी घुट्टी पिलायेगी कि वह लट्टू हो जायेगा।"

इन हँसोड़ों को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हुए मर्यूत्का ने कहा :

"भौंकते रहो जितना जी चाहे, मछली का हैजा! तुम्हें हँसी आती है... अगर भाग गया तो?"

"उल्लू हो तुम! उसका क्या दिमाग चल निकला है? इस रेगिस्तान में भला भागकर वह कहाँ जायेगा?"

"रेगिस्तान हो या न हो, पर इस तरह अधिक बेहतर है। सो जा तू, सूरमा!"

मर्यूत्का ने लेफ़्टीनेण्ट को नमदे के नीचे धकेल दिया और खुद बगल में

लुढ़ककर सो गई।

नमदे का कम्बल ओढ़कर सोने में तो बहुत मजा आता है। नमदे से जुलाई की गर्मी, घास और दूर-दूर तक फैले हुए सीमाहीन मैदानों की अनुभूति होती है। सुख-चैन की नींद में डूबा हुआ शरीर बिल्कुल गर्म और नर्म हो जाता है।

येव्स्युकोव अपने कालीन के नीचे खर्राटे ले रहा था। मर्यूत्का के चेहरे पर स्वप्निल-सी मुस्कान थी। गार्ड का लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक चित लेटा हुआ गहरी नींद सो रहा था। उसके पतले-पतले होंठ एक सुन्दर रेखा बना रहे थे।

नहीं सो रहा था तो सिर्फ़ सन्तरी। वह नमदे के सिरे पर बैठा था और बन्दूक उसके घुटनों पर रखी थी। बन्दूक उसे अपनी पत्नी और प्रेयसी से भी अधिक प्यारी थी।

सन्तरी बर्फ़ की सफ़ेद धुँध के बीच से उस तरफ़ नज़र लगाये था, जिधर से ऊँटों की घण्टियों की धीमी-धीमी टन-टन सुनाई दे रही थी।

चवालीस ऊँट हैं अब। मंजिल तक पहुँच ही जायेंगे, चाहे कठिनाइयों का सामना भी करना पड़े।

लाल फ़ौज के सिपाहियों के मन में अब डर-संशय नहीं रहा।

तेज हवा के झोंके चीखते हुए आ रहे थे और सन्तरी के तन को चीरते चले जा रहे थे। ठण्ड से सिकुड़ते हुए सन्तरी ने पीठ पर नमदा लपेट लिया। बर्फीली छुरियों ने उसका तन काटना बन्द कर दिया और शरीर में गर्मी आ गई।

बर्फ़, धुंध, रेत।

अपरिचित एशियाई देश।

"ऊँट कहाँ हैं? तेरा बेड़ा गर्क हो, ऊँट कहाँ हैं? लानत है तुम पर! सो रहा है कम्बख्त? यह तूने क्या कर डाला, कमीने? तेरी चमड़ी उधेड़ डालूँगा!"

बूट की ज़ोरदार ठोकर लगने से सन्तरी का सिर चकरा उठा। वह बहकी-बहकी नज़र से चारों ओर देखने लगा।।

बर्फ़ और धुँध।

हल्का-हल्का धुँधलका, सुबह का धुँधलका। रेत।

ऊँट ग़ायब थे।

ऊँट जहाँ चर रहे थे वहाँ ऊँटों और आदमियों के पैरों के निशान थे। वहाँ निशान थे किर्गिजों के नुकीले जूतों के।

लगता था कि तीन किर्गिज रात भर दस्ते का पीछा करते रहे थे और जैसे ही सन्तरी की आँख लगी थी ऊँटों को ले उड़े थे।

लाल फ़ौज के सिपाही चुपचाप खड़े थे। ऊँट ग़ायब थे। ढूँढ़ा भी जाये तो कहाँ? रेगिस्तान में खोज लेना सम्भव नहीं...

"तुझ कुत्ते के पिल्ले को अगर गोली भी मार दी जाये तो वह भी कम है!" येव्स्युकोव ने सन्तरी से कहा।

सन्तरी खामोश था। आँसू की बूँदें उसकी आँखों की कोरों में मोतियों की तरह चमक रही थीं।

लेफ़्टीनेण्ट नमदे के नीचे से निकला। इधर-उधर देखकर उसने सीटी बजाई और मज़ाक उड़ाते हुए कहा :

"यह रहा अनुशासन! भगवान ही मालिक है!"

"चुप रह पाजी!" येव्स्युकोव गुस्से से गरजा और फिर पराई-सी आवाज़ में धीरे-से फुसफुसाया, "यहाँ खड़े-खड़े क्या कर रहे हो भाइयो, बढ़े चलो!"

अब केवल ग्यारह व्यक्ति एक ही पंक्ति में घिसटते हुए चल रहे थे। वे थककर चूर थे और लड़खड़ाते रेतीले टीलों को पार कर रहे थे।

दस जने इस भयानक रास्ते में दम तोड़ चुके थे।

सुबह कोई न कोई बहुत बुरी हालत में आखिरी बार मुँदी हुई आँखें मुश्किल से खोलता, लकड़ी की तरह सख़्त और सूजे हुए पैर फैलाता और भारी आवाज़ें निकालता।

गुलाबी येव्स्युकोव लेटे हुए व्यक्ति के करीब जाता। कमिसार का चेहरा अब जाकेट की तरह गुलाबी नहीं रह गया था। वह सूख गया था और उस पर दुख-मुसीबतों की छाप साफ़ नज़र आती थी। चेहरे की बुन्दियाँ ताँबे के पुराने सिक्कों जैसी लगती थीं।

कमिसार इस सिपाही को गौर से देखता और सिर हिलाता। फिर उसकी पिस्तौल की नली इस आदमी की चिपकी-सूखी कनपटी में एक सूराख कर देती। एक काला-सा और लगभग रक्तहीन धब्बा बाकी रह जाता।

झटपट उस पर रेत डालकर ये लोग आगे चल देते।

लोगों की जाकेटें और पतलून तार-तार हो चुके थे। बूट टूटकर रास्ते में गिर गये थे। उन्होंने पैरों पर नमदे के टुकड़े और ठण्ड से सुन्न हुई उँगलियों पर चिथड़े लपेट लिये थे।

अब दस आदमी लड़खड़ाते, हवा के झोंकों में डगमगाते हुए आगे बढ़ रहे थे। हाँ, एक व्यक्ति था, जो बहुत शान्त भाव से तनकर चल रहा था।

यह था गार्ड का लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूख-ओत्रेक।

लाल सैनिकों ने कई बार येव्स्युकोव से कहा :

"साथी कमिसार! कब तक इसे इसी तरह साथ-साथ लटकाये फिरेंगे? बेकार ही इसे भी खिलाना पड़ रहा है। फिर इसके कपड़े, इसके जूते भी बढ़िया हैं, उन्हें बाँटा जा सकता है।"

मगर येव्स्युकोव ने बहुत कड़ाई से ऐसा करने से मना कर दिया।

"इसे या तो हेड-क्वार्टर में पहुँचाऊँगा या फिर खुद भी इसके साथ ही खत्म हो जाऊँगा। वह बहुत-सी बातें बता सकता है। ऐसे आदमी का यों ही खत्म कर देना ठीक नहीं। उसे उचित सजा मिलेगी।"

लेफ़्टीनेण्ट की कुहनियाँ रस्सी से बँधी हुई थीं और रस्सी का दूसरा सिरा मर्यूत्का की कमर से। मर्यूत्का बहुत मुश्किल से घिसटती हुई चल रही थी। उसके रक्तहीन चेहरे पर बिल्ली जैसी पीली और चमकती हुई आँखें अब और भी अधिक बड़ी-बड़ी नज़र आने लगी थीं।

मगर लेफ़्टीनेण्ट इससे बेखबर था। हाँ, उसके चेहरे का रंग अवश्य कुछ फीका पड़ गया था।

येव्स्युकोव एक दिन लेफ़्टीनेण्ट के पास गया। उसने उसकी गहरी नीली आँखों में आँखें डालीं और बड़ी कठिनाई से कहा :

"शैतान ही जानता है तुझे! तू आदमी है या कुछ और? शरीर पर मांस नहीं, मगर शक्ति है दो के बराबर! कहाँ से आई तुझमें इतनी शक्ति?"

लेफ़्टीनेण्ट के होंठों पर सदा की-सी चिढ़ानेवाली मुस्कान फैल गई। उसने शान्त भाव से जवाब दिया :

"तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी यह बात। संस्कृतियों का अन्तर है। तुम्हारी आत्मा तुम्हारे शरीर की दासी है और मेरा शरीर मेरी आत्मा के इशारे मानता है। मैं अपने शरीर को सभी कुछ सहन करने का आदेश दे सकता हूँ।"

"तो यह बात है," कमिसार ने शब्दों पर ज़ोर देकर कहा।

दोनों और रेतीली पहाड़ियाँ सिर उठाये खड़ी थीं—नर्म-नर्म, ढालू और लहराती हुई। इनकी चोटियों पर रेत साँपों की तरह तेज हवा में फनफना और लहरा रही थी। लगता था कि रेगिस्तान का कभी अन्त नहीं होगा।

जब-तब कोई न कोई दाँत भींचकर रेत पर गिर पड़ता। वह हताश होकर गिड़गिड़ाता :

"अब आगे नहीं चला जाता। मुझे यहीं छोड़ दो। और हिम्मत नहीं रही।"

येव्स्युकोव उसके करीब जाता, डाँटता-डपटता और धकेलते हुए कहता :

"चल आगे! क्रान्ति को पीठ दिखाते हुए शर्म नहीं आती?"

ये लोग जैसे-तैसे उठते। आगे चल देते। एक दिन एक सिपाही रेंगता हुआ एक पहाड़ी की चोटी पर चढ़ा और अपना सूखा हुआ सिर घुमाकर चीख उठा :

"भाइयो, अराल!"

इतना कहकर वह मुँह के बल गिर पड़ा। येव्स्युकोव अपनी बची-खुची शक्ति समेटकर पहाड़ी पर चढ़ा। उसने अपनी फूली हुई आँखों के सामने चकाचौंध करती हुई नीलिमा देखी। उसने आँखें मूँद लीं और अपनी टेढ़ी उँगलियों से रेत खुरचने लगा।

कमिसार ने कोलम्बस का नाम नहीं सुना था। उसे यह भी मालूम नहीं था कि "ज़मीन!" शब्द सुनकर स्पेनी मल्लाह भी अपनी उँगलियों से इसी भाँति जहाज के डेक को खुरचने लगे थे।

चौथा अध्याय

जिसमें मर्यूत्का पहली बार लेफ़्टीनेण्ट से बातचीत करती है और कमिसार एक समुद्री अभियान दल भेजता है

दूसरे दिन तट पर बसी हुई किर्गिजों की एक बस्ती नज़र आई

इसकी पहली निशानी थी उपलों के धुएँ की तेज गन्ध, जो रेतीली पहाड़ियों की ओर से आ रही थी। लोगों के खाली पेटों में बेतहाशा चूहे दौड़ने लगे।

फिर उन्हें खेमों के मटमैले गुम्बद दिखाई दिये। छोटे-छोटे कदवाले, झबरे कुत्ते भौंकते हुए उनकी तरफ़ दौड़े।

किर्गिज अपने-अपने खेमों के दरवाजे पर जमा हो गये। वे चलते-फिरते मानवीय पंज़रों को दया और आश्चर्य की दृष्टि से देख रहे थे।

बैठी हुई नाकवाला एक बूढ़ा अपनी बकरदाढ़ी सहलाता और फिर छाती पर हाथ फेरता हुआ बोला :

"सलाम अलैकुम! किधर जा रहे हो जवान?"

येव्स्युकोव ने धीरे से हाथ मिलाया।

"हम लाल फ़ौज के सिपाही हैं। कजालीन्स्क को जा रहे हैं। कृपया हमें घर ले जाकर खाना खिलाओ। सोवियत इसके लिये तुम्हारा आभार मानेगी।"

किर्गिज ने अपनी बकरदाढ़ी हिलाई और होंठ चबाये।

"अरे हुजूर... लाल सिपाही। बोल्शेविक। केन्द्र से आये हैं?"

"नहीं, बाबा। केन्द्र से नहीं, गूर्येव से आ रहे हैं।"

"गूर्येव से? अरे हुजूर, अरे हुजूर। करा-कुम को पार करके आये हैं?"

किर्गिज की तिरछी आँखों में इस फीके पड़े गुलाबी व्यक्ति के लिये अन्दर और भय की भावना चमक उठी, जो फरवरी महीने की बर्फीली हवाओं से लोहा लेता हुआ करा-कुम का भयानक रेगिस्तान पैदल पार करके गूर्येव से अराल सागर पहुँचा था।

बूढ़े ने ताली बजाई। कुछ औरतें भागती हुई आयीं। बूढ़े ने घरघराती आवाज़ में उन्हें कुछ हुक्म दिया।

उसने कमिसार की बाँह थामी।

"चलो जवान खेमे में। थोड़ा सो लो! फिर उठकर पुलाव खाना।"

सिपाही खेमे में मुर्दों की तरह जा पड़े और ऐसे सोये कि रात होने तक उन्होंने करवट भी न ली। किर्गिजों ने पुलाव तैयार किया और मेहमानों को खिलाया। उन्होंने सिपाहियों के कन्धों की उभरी हुई हड्डियों को सहानुभूति से थपथपाया।

"खाओ जवान, खाओ! तुम सूख गये हो! खाओ, तगड़े हो जाओगे!"

ये लोग खाने पर बस टूट ही पड़े। चर्बीवाले पुलाव से इनके पेट फूल गये और बहुतों की तो तबियत भी खराब हो गयी। वे भागकर मैदान में जाते, तबियत हल्की करते और लौटकर फिर खाने लगते। उनके पेट फिर भर गये, तन गर्म हो गये और वे फिर सो गये।

मगर मर्यूत्का और लेफ़्टीनेण्ट नहीं सोये।

मर्यूत्का अँगीठी में जलते हुए अँगारों के करीब बैठी थी। वह बीती हुई मुसीबतों को भूल चुकी थी।

उसने अपने थैले से पेंसिल का एक टुकड़ा निकाला और सचित्र मासिक 'नया जमाना' के एक पृष्ठ पर कुछ अक्षर लिखे। यह पत्रिका उसने एक किर्गिज औरत से माँग ली थी। इसके एक पूरे के पूरे पृष्ठ पर वित्तमन्त्री काउन्ट कोकोवत्सेव का चित्र अंकित था। मर्यूत्का ने काउण्ट के चौड़े माथे और सुनहरी दाढ़ी पर टेढ़े-मेढ़े अक्षर लिखे।

रस्सी अभी भी मर्यूत्का की कमर से बँधी थी और उसका दूसरा सिरा पीठ पर बँधे हुए लेफ़्टीनेण्ट के हाथों को कसे हुए था।

मर्यूत्का ने केवल एक घण्टे के लिये लेफ़्टीनेण्ट के हाथ खोले थे ताकि वह पुलाव खा सके। इसके बाद उसने लेफ़्टीनेण्ट के हाथ फिर कसकर बाँध दिये।

लाल फ़ौज के सिपाही मज़ाक करते :

"बिल्कुल ऐसे जैसे जंजीर में कुत्ता बँधा हो!"

"मर्यूस्का, लगता है कि तुम तो दिल दे बैठी हो?" बाँधकर रखो अपने प्रियतम को। कहीं ऐसा न हो कि परी देश की कोई राजकुमारी उड़न-खटोले पर उड़ती हुई आये और तुम्हारे साजन को उड़ा ले जाये।

मर्यूत्का चुप्पी साधे रहती।

लेफ़्टीनेण्ट खेमे की एक चोब से टेक लगाये बैठा था। उसकी नीली आँखें धीरे-धीरे हिलने-डुलनेवाली पेंसिल को बहुत ध्यान से देख रही थीं।

आगे की ओर झुकते हुए उसने पूछा :

"क्या लिख रही हो?"

मर्यूत्का ने अपनी लटकती हुई लाल-सी जुल्फ के बीच से उस पर नज़र डाली और कहा :

"तुम्हें मतलब?"

"शायद तुम पत्र लिखना चाहती हो? तुम बोलती जाओ, मैं लिख दूँगा।"

मर्यूत्का ज़रा हँस दी।

"बहुत चालाक बनते हो! मतलब यह कि तुम्हारे हाथ खोल दूँ, तुम मुझे एक हाथ जमाओ और नौ दो ग्यारह हो जाओ! ऐसी बुद्धू न समझो तुम मुझे! तुम्हारी मदद की मुझे ज़रूरत नहीं, कविता लिख रही हूँ।"

लेफ़्टीनेण्ट की पलकें आश्चर्य से फैल गयीं। उसने चोब से पीठ हटायी।

"क-वि-ता? तुम कविता लिखती हो?"

मर्यूत्का ने पेंसिल का ऐंठना बन्द कर दिया और शर्म से लाल हो गई।

"घूर क्या रहे हो? तुम क्या समझते हो कि बस तुम ही बड़े हजरत हो जो माजूरका नाच नाचना जानते हो और यह कि मैं एक बेवक़ूफ़ देहाती लड़की हूँ! तुम से ज़्यादा बेवक़ूफ़ नहीं हूँ!"

लेफ़्टीनेण्ट ने कन्धे झटके, लेकिन उसके हाथ नहीं हिले।

"मैं तुम्हें बेवक़ूफ़ नहीं समझता हूँ। सिर्फ़ हैरान हो रहा हूँ। कविता करने का भला आजकल कौन-सा ज़माना है?"

मर्यूत्का ने पेंसिल एक ओर रख दी और झटके के साथ सिर ऊपर उठाया। उसके लाल रंग के बाल कन्धे पर फैल गये।

"सचमुच बड़े ही अजीब आदमी हो तुम! तुम शायद यही समझते हो कि रोयों के नर्म-नर्म बिस्तर पर लेटकर ही कविता रची जा सकती है? पर अगर मेरी आत्मा बेकरार हो तो? कैसे हमने भूखे पेट और ठण्ड से ठिठुरते हुए रेगिस्तान पार किया, मैं इसे शब्दों में व्यक्त करने के सपने देखती हूँ। काश, मैं लोगों के दिलों तक अपनी बात पहुँचा सकती! मैं तो अपने दिल के खून से कविता रचती हूँ, मगर कोई छापता ही नहीं। कहते हैं कि मुझे पढ़ना चाहिये। मगर पढ़ने का वक्त ही कहाँ है? मैं तो सीधे-सीधे ढंग से अपने मन की बात लिखती हूँ!"

लेफ़्टीनेण्ट ज़रा-सा मुस्कराया।

"सुनाओ तो! बहुत जिज्ञासा है मुझे। मैं कविता को थोड़ा-बहुत समझता हूँ।"

"तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी यह। तुम्हारी नसों में अमीरों का खून है, बहुत

चिकना-चिकना। तुम फूलों और सुन्दरियों के बारे में रची गई कविताएँ पसन्द करते हो और मैं लिखती हूँ ग़रीबों के बारे में, क्रान्ति के सम्बन्ध में," मर्यूत्का ने दुखी होते हुए कहा।

"समझूँगा क्यों नहीं?" लेफ़्टीनेण्ट ने जवाब दिया, "बहुत सम्भव है कि उनकी विषय-वस्तु मेरे लिये परायी हो, मगर आदमी आदमी को समझ तो सकता ही है।"

मर्यूत्का ने कुछ झिझकते हुए कोकोवत्सेव का चित्र उल्टा और आँखें झुका लीं।

"ख़ैर, चाहते हो तो सुनो! मगर हँसना नहीं। तुम्हारे बाप ने तो बीस साल की उम्र तक तुम्हारी देखभाल के लिये धाय रख छोड़ी होगी, मगर मुझे तो अपने हिम्मत से ही इस उम्र तक पहुँचना पड़ा था।"

"नहीं हसूँगा! कसम खाता हूँ!"

"तो सुनो! मैंने सब कुछ ही कविता में लिख डाला है। कैसे हम क़ज़्ज़ाकों से जूझे, कैसे बचकर रेगिस्तान में पहुँचे।"

मर्यूत्का ने खाँसकर गला साफ़ किया। उसने नीची आवाज़ में शब्दों पर ज़ोर दे देकर कविता-पाठ शुरू किया। वह भयानक ढंग से अपनी आँखें नचा रही थी।

आये, आये हम पर क़ज़्ज़ाक चढ़कर,

लिया हमने उनसे लोहा डटकर।
दुश्मनों की संख्या थी भारी,
हमने बाजी जीती, पर हारी।
रखकर हथेली पर जान हम लड़े,
थोड़े थे बहुत हम, फिर भी अड़े।
तेईस हम बचे, और गये मारे!
मोर्चे से हम हटे, हारे।

"बस इससे आगे यह कविता किसी तरह चल ही नहीं पा रही, मछली का हैजा! समझ में नहीं आता कि ऊँटों की चर्चा कैसे करूँ?" मर्यूत्का ने परेशान होते हुए कहा।

लेफ़्टीनेण्ट की नीली आँखें तो छाया में थीं। केवल आँखों की सफ़ेदी पर अँगीठी की चमकती हुई आग की झलक पड़ रही थी। उसने कुछ देर बाद कहा :

"हाँ... खासी अच्छी है! बहुत-सी अनुभूतियाँ हैं, भावनायें हैं। समझी न? साफ़ पता चलता है कि दिल की गहराई से निकली पंक्तियाँ हैं।" इतना कहने के बाद उसका सारा शरीर एकबारगी हिला और हिचकी की सी आवाज़ हुई। उसने मानो इस आवाज़ को छिपाते हुए जल्दी से कहा, "देखो बुरा न मानना, मगर कविता के रूप में बहुत कमज़ोर हैं ये पंक्तियाँ। इन्हें माँजने की ज़रूरत है, इनमें कला की कमी है।"

मर्यूत्का ने उदासी से कागज को अपने घुटनों पर रख दिया। वह चुपचाप खेमे की छत ताकने लगी। फिर उसने कन्धे झटके।

"मैं भी तो यही कहती हूँ कि इसमें भावनाएँ हैं। जब मैं अपनी भावनाएँ व्यक्त करती हूँ तो मेरे अन्दर की हर चीज़ सिसकने लगती है। रही यह बात कि इन्हें माँजा नहीं गया तो सभी जगह यही सुनने को मिलता है, बिल्कुल इसी तरह जैसे तुमने कहा है, 'आपकी कविताओं में मँजाव नहीं, छापा नहीं जा सकता'। मगर इन्हें माँजा कैसे जाये। क्या गुर है इसका! आप पढ़े-लिखे आदमी हैं, शायद आपको यह गुर मालूम होगा?" मर्यूत्का भावावेश में लेफ़्टीनेण्ट को "आप" तक कह गई।

लेफ़्टीनेण्ट कुछ देर चुप रहा और फिर बोला :

"मुश्किल है इस सवाल का जवाब देना। कविता रचना तो, देखो न, एक कला है। हर कला के लिये अध्ययन ज़रूरी है। हर कला के अपने नियम, अपने क़ानून होते हैं। मिसाल के तौर पर अगर इंजीनियर को पुल बनाने के सभी नियम मालूम न हों तो वह या तो पुल बना ही नहीं पायेगा या फिर ऐसा निकम्मा पुल बनायेगा जो किसी काम का नहीं होगा।"

"यह तो पुल की बात हुई। इसके लिये तो हिसाब और समझ-बूझ की दूसरी बहुत-सी बातों की जानकारी ज़रूरी है। मगर कविता तो मेरे मन में बसी है, जन्मजात है। हो सकता है कि यह प्रतिभा ही हो?"

"प्रतिभा हो, तो भी क्या है? अध्ययन से प्रतिभा का भी विकास होता है। इंजीनियर इसीलिये डाक्टर नहीं बल्कि इंजीनियर है कि उसमें जन्म से ही इंजीनियरिंग की ओर रुझान था। लेकिन अगर वह पढ़ने-लिखने में दिलचस्पी न लेता तो उसका कुछ न बनता-बनाता!"

"अच्छा! हाँ, ऐसा ही लगता है, मछली का हैजा! लड़ाई खत्म होते ही ऐसे स्कूल में भर्ती हो जाऊँगी जहाँ कविता लिखना सिखाते हैं। ऐसे स्कूल भी तो होते होंगे न?

"शायद होते ही होंगे," लेफ़्टीनेण्ट ने सोचते हुए कहा।

"ज़रूर जाऊँगी ऐसे स्कूल में पढ़ने। कविता तो मेरा जीवन बनकर रह गई है। मेरी आत्मा तड़पती है अपनी कविताओं को किताब के रूप में छपा हुए देखने को और बेचैन रहती है हर कविता के नीचे 'मरीया बासोवा' नाम देख पाने को!"

अँगीठी बुझ चुकी थी। अँधेरे में खेमे से टकराती हुई हवा की सरसराहट सुनाई दे रही थी।

"सुनो तो," मर्यूत्का ने कहा, "रस्सी से तो तुम्हारे हाथों में दर्द होता होगा न!"

"बहुत तो नहीं। बस, ज़रा सुन्न हो गये हैं।

"अच्छा देखो, तुम कसम खाओ कि भागोगे नहीं। मैं तुम्हारे हाथ खोल दूँगी।"

"मैं भागकर जा ही कहाँ सकता हूँ? रेगिस्तान में, ताकि गीदड़ मुझे नोच खाये। मैं ऐसा बेवक़ूफ़ नहीं हूँ।"

"खैर, फिर भी कसम खाओ। दोहराओ मेरे पीछे-पीछे ये शब्द : 'अपने अधिकारों के लिये लड़नेवाले सर्वहारा की कसम खाकर लाल फ़ौजी मरीया बासोवा को वचन देता हूँ कि मैं भागना नहीं चाहता हूँ।"

लेफ़्टीनेण्ट ने कसम दोहराई।

मर्यूत्का ने रस्सी की गाँठ ढीली कर दी, फूली हुई कलाइयों को निजात मिली। लेफ़्टीनेण्ट ने आराम से अपनी उँगलियाँ हिलायीं-डुलायीं।

"अच्छा, अब सो जाओ," मर्यूत्का ने जम्हाई ली, "अब भी अगर भागोगे तो दुनिया में सबसे कमीने आदमी होगे। यह लो, नमदा, ओढ़ लो।

"धन्यवाद, मैं अपना कोट ओढ़ लूँगा। शुभ रात्रि, मरीया..."

"मरीया फिलातोव्ना," मर्यूत्का ने बड़े गर्व से लेफ़्टीनेण्ट को अपना पूरा नाम बताया और नमदे के नीचे दुबक गई।

येव्स्युकोव को हेड-क्वार्टर तक अपनी खबर पहुँचाने की जल्दी थी।

मगर बस्ती में कुछ दिनों तक आराम करना, ठिठुरन से छुट्टी पाना और पेट भर कर खाना ज़रूरी था। एक सप्ताह बाद उसने तट के साथ-साथ चलते हुए आराल्स्क की बस्ती तक पहुँचने और फिर वहाँ से कज़ालीन्स्क जाने का निर्णय किया।

दूसरे सप्ताह में कमिसार को इधर से गुजरनेवाले किर्गिजों की ज़बानी यह मालूम हुआ कि पतझर के तूफ़ान ने मछुओं की एक नाव को चार किलोमीटर दूरी पर एक खाड़ी में ला पटका है। किर्गिजों ने बताया कि नाव बिल्कुल

सही-सलामत है। वह ऐसे ही तट पर पड़ी है और मछुए सम्भवतः डूब गये हैं।

कमिसार नाव को देखने गया।

नाव लगभग नई थी, शाहबलूत की मज़बूत पीली लकड़ी की बनी हुई। तूफ़ान से उसको कोई हानि नहीं पहुँची थी। केवल पाल फट गया था और पतवार टूट गई थी।

येव्स्युकोव ने सिपाहियों से सलाह-मशविरा किया। उसने समुद्र के रास्ते सिर दरिया के दहाने तक तत्काल एक टोली भेजने का फैसला किया। नाव में आसानी से चार आदमी बैठ सकते थे और थोड़ी रसद भी भेजी जा सकती थी।

"ऐसा करना बेहतर होगा," कमिसार ने कहा, "इस तरह कैदी को जल्दी से वहाँ पहुँचाया जा सकेगा। कौन जाने पैदल सफर में क्या हो जाये! उसे हेड-क्वार्टर, तक पहुँचाना ज़रूरी है। दूसरे, हेड-क्वार्टर को हमारी खबर मिल जायेगी। वहाँ से घुड़सवारों के जरिये हमें कपड़े और कुछ दूसरी चीज़ें मिल जायेंगी। अनुकूल हवा होने पर तो नाव द्वारा तीन-चार दिनों में अराल सागर को पार करके पाँचवें दिन कज़ालीन्स्क पहुँचा जा सकता है।"

येव्स्युकोव ने रिपोर्ट लिखकर तैयार की। लेफ़्टीनेण्ट से हासिल हुई दस्तावेजों के साथ उसने उसे कैनवास के एक थैले में सी दिया। ये दस्तावेज वह हर समय अपनी जाकेट की अन्दरवाली जेब में सम्भालकर रखता था।

किर्गिज नारियों ने पाल की मरम्मत की और स्वयं कमिसार ने टूटे हुए तख्तों से पतवार बनाई।

फरवरी की एक ठण्डी सुबह, जब फिरोजा की पृष्ठभूमि पर नीचा सूरज पालिश किये हुए पीतल के थाल की तरह रेंग रहा था, कई ऊँट नाव को घसीट कर जमी बर्फ़ की सीमा तक लाये।

नाव को खुले पानी में डाल दिया गया और मुसाफिर इस पर सवार हुए।

येव्स्युकोव ने मर्यूत्का से कहा :

"तुम इस दल की नेत्री होगी! तुम पर सारी जिम्मेदारी होगी। इस अफसर का ध्यान रखना। अगर यह निकल भागा तो तुम्हारे जीने पर लानत। इसे ज़िन्दा या मुर्दा हेड-क्वार्टर तक पहुँचाना ही है। अगर कहीं सफ़ेद गार्डों के हत्थे चढ़ जाओ तो इसे ज़िन्दा मत रहने देना। अच्छा जाओ!"

पाँचवाँ अध्याय

यह सारा अध्याय डैनियल डेफो के उपन्यास 'राबिन्सन क्रूसो' से चुराया गया है... हाँ, इतना अन्तर अवश्य है कि इसमें राबिन्सन को फ्रायडे के लिये बहुत देर तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती है

अराल दिलकश सागर नहीं है।

तट एकदम सपाट हैं, जिनपर घास उगी हुई है, रेत और रेत की चलती-फिरती पहाड़ियाँ हैं।

अराल के द्वीप कड़ाही में रखे चपाती की तरह नज़र आते हैं। वे ऐसे सपाट हैं मानो उनपर पालिश कर दी गई हो। वे एकदम निर्जीव प्रतीत होते हैं।

यहाँ न हरियाली है, न परिन्दे और न कोई दूसरे जीव-जन्तु। इंसान यहाँ सिर्फ़ गर्मियों में नज़र आते हैं।

अराल का सबसे बड़ा द्वीप है बरसा-केलमेस।

इसका क्या मतलब है, कोई नहीं जानता, मगर किर्गिज इसका अर्थ "इंसान की मौत" बताते हैं।

गर्मियों में आराल्स्क की बस्ती से मछुए इस द्वीप पर आते हैं। बरसा-केलमेस में खूब मछलियाँ हाथ आती हैं, समुद्र मछलियों से अटा पड़ा रहता है।

मगर पतझर में जैसे ही समुद्र की सतह पर सफ़ेद झाग की टोपियाँ नज़र आने लगती हैं, मछुए आराल्स्क बस्ती की शान्त खाड़ी में लौट जाते हैं और फिर बसन्त तक वहाँ नज़र ही नहीं आते।

अगर तूफ़ान शुरू होने के पहले ही मछुए सारी मछलियाँ तट तक ले जाने में सफल नहीं हो जाते तो वह नमक लगी मछलियों को जाड़े भर के लिये लकड़ी के बाड़ों में द्वीप पर ही छोड़ देते हैं।

सख़्त जाड़े में जब समुद्र चेर्निशोव खलीज से बरसा केलमेस द्वीप तक जम जाता है, तो गीदड़ों की तो खूब बन आती है। वे दौड़ते हुए द्वीप पर पहुँचते हैं और नमकीन मछलियाँ इतनी अधिक मात्रा में खाते हैं कि वहीं मर जाते हैं।

बसन्त आता है तो सिर दरिया की पीली बाढ़ बर्फ़ की चादर को तोड़ती है। तब मछुए द्वीप पर लौटते हैं। मगर पतझर में वहाँ छोड़ी हुई मछलियाँ ग़ायब पाते हैं।

नवम्बर से फरवरी तक समुद्र में बड़ी हलचल रहती है, सभी ओर ज़ोरों के तूफ़ान आते हैं। बाकी समय में थोड़ी हवा चलती है और गर्मियों में अराल सागर दर्पण की तरह शान्त और समतल हो जाता है।

अराल ऊब पैदा करने वाला समुद्र है।

अराल में केवल एक ही आकर्षक चीज़ है—उसकी नीलिमा, असाधारण नीलिमा।

गहरी नीलिमा, मखमली-मुलायम नीलिमा, अथाह नीलिमा।

भूगोल की सभी पुस्तकों में इसी तरह से वर्णन किया गया है इस सागर का।

मर्यूत्का और लेफ़्टीनेण्ट को रवाना करते हुए कमिसार को यह आशा थी कि आगामी सप्ताह में मौसम शान्त रहेगा। किर्गिज बुज़ुर्गों ने भी यही कहा था कि शान्त मौसम के चिह्न हैं।

इसलिये तो मर्यूत्का, लेफ़्टीनेण्ट और नौचालन में अभ्यस्त दो सिपाहियों—सेम्यान्नी और व्याखिर—को समुद्री रास्ते कज़ालीन्स्क की ओर ले जानेवाली नाव अपने सफ़र पर रवाना हो गई।

अनुकूल हवा से पाल फूल रहा था, पानी में प्यारी-प्यारी लहरियाँ पैदा हो रही थीं। पतवार की छपछप लोरियाँ दे रही थी। नाव के दोनों ओर गाढ़ा-गाढ़ा फेन पैदा हो रहा था।

मर्यूत्का ने लेफ़्टीनेण्ट के हाथ बिल्कुल खोल दिये। नाव से भला वह कहाँ भागकर जायेगा? लेफ़्टीनेण्ट अब नाव चलाने में सेम्यान्नी और व्याखिर का हाथ बँटाने लगा।

वह खुद अपने को कैदखाने की तरफ़ ले जा रहा था।

जब उसकी बारी न होती तो वह नमदा ओढ़कर नाव के तल में जा लेटता। किन्हीं गुप्त-गहरे रहस्यों का ध्यान करके, जिन्हें उसके सिवा कोई दूसरा नहीं जानता था, वह मुस्कराता रहता।

मर्यूत्का उसके इस अन्दाज़ से परेशान हो उठती।

"क्यों यह हर समय दाँत निकालता रहता है? जैसे कि अपने घर को जा रहा हो। उसका अन्त तो बिल्कुल स्पष्ट है—हेड-क्वार्टर में पहुँचेगा, वहाँ उससे पूछ-ताछ होगी और उसके बाद खेल खत्म। ज़रूर इसके पेंच कुछ ढीले हैं।"

मगर लेफ़्टीनेण्ट मर्यूत्का के विचारों से बिल्कुल अनजान, पहले की तरह ही

मुस्कराता रहा।

मर्यूत्का जब सब्र न कर पाई तो उसने पूछ ही लिया :

"तुमने नाव चलाना कहाँ सीखा?"

गोवोरूखा-ओत्रेक ने सोचकर जवाब दिया :

"पीटर्सबर्ग में... मेरा अपना यॉट था... बड़ा-सा। मैं उसमें समुद्र में जाता था।"

"कौन-सा यॉट?"

"ऐसा... बादबानी जहाज।"

"ओह! ऐसे यॉटों से तो मैं अच्छी तरह परिचित हूँ। अस्त्रखान के क्लब में बुर्जुआ लोगों के ऐसे बहुत-से यॉट मैंने देखे हैं। ढेरों थे उनके पास! सभी हंसों की तरह सफ़ेद और खासे बड़े-बड़े। मगर मेरा सवाल दूसरा था। क्या नाम था उसका?"

"नेल्ली।"

"यह क्या नाम हुआ?"

"मेरी बहन का नाम था यह। उसी के नाम पर मैंने यॉट का नाम रखा था।"

"इसाइयों के तो ऐसे नाम नहीं होते।"

"उसका नाम तो था येलेना... मगर अंग्रेज़ी ढंग से—नेल्ली।"

मर्यूत्का चुप हो गई। वह सफ़ेद सूरज को देखने लगी, जिसकी ठण्डी और सफ़ेद मिठास हर चीज़ को मधुमय बना रही थी। वह पानी की नीलिमा को अपनी बाँहों में कसने को नीचे उतर रहा था।

मर्यूत्का ने फिर बात चलायी :

"यह पानी कितना नीला है! कास्पियन का पानी हरा है। और यहाँ देखो तो कैसा नीला है!"

लेफ़्टीनेण्ट ने कुछ ऐसे जवाब दिया मानो अपने से बात कर रहा हो, खुद को जवाब दे रहा हो :

"फोरेल के अनुसार इसका लगभग तीसरा नम्बर है।'

"क्या? मर्यूत्का चौंककर उसकी ओर घूमी।

"यह तो मैं अपने से ही कुछ कह रहा था। पानी के बारे में। मैंने हाइड्रोग्राफी की एक किताब में पढ़ा था कि इस समुद्र का पानी बहुत चमकता हुआ नीला है। फोरेल नामक एक वैज्ञानिक ने विभिन्न समुद्रों के पानी की एक तालिका बनाई है। सबसे अधिक नीला पानी शान्त महासागर का है। इस तालिका के

अनुसार इस समुद्र का स्थान तीसरा है।"

मर्यूत्का ने अपनी आँखें कुछ मूँद लीं मानो पानी की नीलिमा व्यक्त करने वाली तालिका को अपनी कल्पना में देख रही हो।

"बहुत ही नीला है यह पानी। किसी दूसरी चीज़ से इसकी तुलना करना सम्भव नहीं। यह ऐसा नीला है जैसे कि..." अचानक उसकी बिल्ली जैसी पीली आँखें लेफ़्टीनेण्ट की नीली आँखों पर जमकर रह गईं। वह आगे को झुकी, उसका पूरा शरीर इस तरह सिहरा मानो उसने असाधारण बात खोज ली हो। उसके होंठ आश्चर्य से खुले रह गये। वह फुसफुसाई, "ऊई माँ! तुम्हारी आँखें भी तो बिल्कुल ऐसी ही नीली हैं, इस पानी जैसी! यही तो मैं सोच रही थी कि इनमें कोई जानी-पहचानी चीज़ है, मछली का हैजा!"

लेफ़्टीनेण्ट खामोश रहा।

क्षितिज नारंगी रंग में डूब गया। दूरी पर पानी में स्याही के धब्बे नज़र आ रहे थे। बर्फ़ीली हवा सागर की सतह में हलचल पैदा करने लगी थी।

"पूर्वी हवा है," सेम्यान्नी ने अपनी फटी वर्दी को लपेटते हुए कहा।

"शायद तूफ़ान आयेगा," व्याखिर बोला।

"आता है तो आये। दो घण्टे और नाव चलायेंगे तो बरसा नज़र आने लगेगा। हवा चलेगी तो रात को वहीं ठहर जायेंगे।"

चुप्पी छा गई। उठती हुई काली-काली लहरों पर नाव हिचकोले खाने लगी। आकाश में बड़े-बड़े काले बादल दिखाई देने लगे।

"बेशक ऐसा ही है। तूफ़ान आ रहा है।"

"बरसा द्वीप जल्द ही नज़र आयेगा। बाईं ओर को होगा वह। ऊल-जलूल जगह है वह बरसा भी। उस पर चाहे जहाँ भी चले जाओ, सभी जगह रेत ही रेत है। बस हवा फर्राटे भरती रहती है... अरे पाल को ढीला करो, जल्दी करो! यह तुम्हारे जनरल का पतलून नहीं है!"

लेफ़्टीनेण्ट समय पर पाल ढीला न कर पाया। नाव ने एक पहलू से पानी में धचका खाया और फेन ने लोगों के चेहरों पर अपना हाथ जमाया।

"मुझपर क्यों बरस रहे हो? मरीया फिलातोव्ना से भूल हो गयी थी।"

"मुझसे भूल हुई? क्या कह रहे हो, मछली का हैजा! पाँच साल की उम्र से पतवार पर मेरा हाथ रहा है!"

ऊँची-ऊँची काली लहरें नाव का पीछा कर रही थीं। वे मुँह फाड़े हुए अजगरों जैसी दिखाई दे रही थीं। वे नाव के पहलुओं पर टूटी पड़ रही थीं।

"हाय माँ! कब आयेगा यह कमबख्त बरसा! अँधेरा कैसा है, हाथ को हाथ नहीं सूझता।"

व्याखिर ने बाईं ओर नज़र दौड़ाई। वह खुशी से चिल्ला उठा :

"वह रहा, कम्बख्त कहीं का!"

झाग और धुंध के बीच एक सफ़ेद तट-रेखा साफ़ चमक रही थी।

"बढ़ाओ तट की ओर," सेम्यान्नी चिल्लाया। "भगवान ने चाहा तो वहाँ पहुँच जायेंगे!"

नाव का पिछला हिस्सा चरचराया, बल्लियाँ भी कराहीं। एक लहर तो उछलकर नाव के भीतर टखनों तक आ घुसी।

"पानी निकालो!" मर्यूत्का उछलकर खड़ी हो गयी और चिल्लाई।

"पानी निकालो? मगर किससे, अपने सिर से?"

"टोपियों से!"

सेम्यान्नी और व्याखिर ने झटपट टोपियाँ उतारीं और तेजी से पानी निकालने लगे।

लेफ़्टीनेण्ट घड़ी भर को हिचका, फिर उसने भी अपनी फर की टोपी उतारी और पानी निकालने में उनका साथ देने लगा।

नीची और सफ़ेद रेखा तेजी से नाव के निकट आ रही थी, बर्फ़ से ढके हुए तट का रूप लेती जा रही थी। उबलते हुए फेन के कारण वह और भी अधिक सफ़ेद दिखाई दे रही थी।

हवा गरजती और फुँकारती हुई आती और लहरों को और ऊँचा उठा देती। एक तूफ़ानी झोंका पाल पर झपटा, जो तोंद की तरह बाहर को निकल पड़ा। कैनवास का पुराना पाल तोप के गोले की तरह फटा।

सेम्यान्नी और व्याखिर मस्तूल की तरफ़ भागे।

"रस्से को थामो," पतवार पर पूरी तरह झुकते हुए मर्यूत्का चिल्लाई।

हहराती और गरजती हुए एक बड़ी लहर पीछे की ओर से आई। नाव एक ओर को झुक गई और ठण्डी-ठण्डी तथा चमकती हुई मोटी-सी धार इसके ऊपर से गुजर गई।

नाव जब सीधी हुई तो ऊपर तक पानी से भरी हुई थी और सेम्यान्नी और व्याखिर का कहीं अता-पता नहीं था। पानी से सराबोर और फटे हुए पाल के टुकड़े हवा में लहरा रहे थे।

लेफ़्टीनेण्ट कमर तक पानी में बैठा हुआ अपने ऊपर जल्दी-जल्दी सलीब बना

रहा था।

"शैतान! लानत तुझ पर! पानी निकाल!" मर्यूत्का ने अपने जीवन में पहली बार बहुत-सी मोटी-मोटी और भद्दी गालियाँ दीं।

लेफ़्टीनेण्ट भीगे पिल्ले की तरह उछलकर खड़ा हो गया और पानी बाहर निकालने लगा।

मर्यूत्का रात के अन्धकार, शोर और हवा में पुकार रही थी :

"से-म्या-आ-न्नी-ई! व्या-आ-खि-इर!"

फेन का थपेड़ा मुँह पर लगा। कोई जवाब नहीं मिला।

"डूब गये, शैतान!"

हवा ने आधी डूबी हुई नाव को तट की ओर धकेल दिया। इर्द-गिर्द का पानी तो जैसे उबल रहा था। पीछे से एक और लहर आई और नाव की तह ज़मीन से जा टकराई।

"चलो बाहर!" नाव से बाहर छलाँग लगाते हुए मर्यूत्का चिल्लाई। लेफ़्टीनेण्ट उसके पीछे-पीछे कूदकर बाहर आ गया।

"नाव को घसीट लो!"

पानी के ज़ोरदार छींटों से आँखें मुँदी जा रही थीं। ऐसे में उन्होंने नाव को तट पर खींचा। वह रेत में मजबूती से जम गई। मर्यूत्का ने बन्दूकें सम्भालीं।

"रसद के बोरे निकाल लाओ!"

लेफ़्टीनेण्ट ने चुपचाप मर्यूत्का का हुक्म बजाया। खुश्क जगह देखकर मर्यूत्का ने बन्दूकें रेत पर डाल दीं। लेफ़्टीनेण्ट ने बोरे रख दिये।

मर्यूत्का ने एक बार फिर अन्धकार में पुकारा :

"सेम्या-आ-न्नी! व्याखि-इर!"

कोई जवाब नहीं मिला।

मर्यूत्का बोरों पर बैठकर औरतों की तरह रो पड़ी।

लेफ़्टीनेण्ट उसके पीछे खड़ा था। उसके दाँत बज रहे थे।

उसने अपने कन्धे झटके और मानो हवा से कहा :

"बेड़ा गर्क! यह तो बिल्कुल परी-कहानी ही है! राबिन्सन क्रूसो और फ्रायडे!"

छठा अध्याय

जिसमें दूसरी बातचीत होती है और यह स्पष्ट किया जाता है कि शून्य से दो दर्जे ऊपर सेन्टीग्रेड वाले समुद्री पानी में नहाने से क्या होता है।

लेफ़्टीनेण्ट ने मर्यूत्का का कन्धा छुआ।

उसने कई बार कुछ कहने की कोशिश की, मगर ज़ोरों से बजते हुए उसके जबड़े ने उसे कुछ कहने न दिया।

उसने मुट्ठी रखकर जबड़े को ज़ोर से दबाया और अपनी बात कही :

"रोने से कुछ हासिल नहीं होगा! चलना चाहिये! यहीं तो बैठे नहीं रहना है! जम जायेंगे!"

मर्यूत्का ने सिर ऊपर उठाया। हताश होते हुए उसने कहा :

"जायेंगे भी तो कहाँ! हम द्वीप पर हैं। चारों ओर पानी है।"

"फिर भी चलना चाहिये। मैं जानता हूँ कि यहाँ लकड़ी के बाड़े हैं।"

"तुम्हें कहाँ से मालूम? तुम क्या कभी आये हो यहाँ?

"नहीं, आया तो कभी नहीं। जिन दिनों स्कूल में पढ़ता था उन्हीं दिनों मैंने पढ़ा था कि मछुए मछलियाँ रखने के लिये यहाँ बाड़े बनाते हैं। हमें ऐसा कोई बाड़ा खोजना चाहिये।"

अच्छा मान लो कि बाड़ा मिल गया। फिर आगे क्या?"

"यह सुबह देखा जायेगा। उठो, फ्रायडे!"

मर्यूत्का ने सहमकर लेफ़्टीनेण्ट की ओर देखा।

"तुम्हारा दिमाग तो नहीं चल निकला? हे भगवान! क्या करूँगी मैं तुम्हारा? आज फ्रायडे नहीं, बुध है।"

"ख़ैर, सब ठीक है! तुम मेरी बातों की ओर ध्यान न दो। हम इसकी बाद में चर्चा करेंगे। अब उठो!"

मर्यूत्का उसकी बात मानते हुए चुपचाप खड़ी हो गई।

लेफ़्टीनेण्ट बन्दूकें उठाने के लिये झुका, मगर मर्यूत्का ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"रुको! गड़बड़ नहीं करो! तुमने वचन दिया है कि भागोगे नहीं!"

लेफ़्टीनेण्ट ने हाथ पीछे हटा लिया और ज़ोर से ठहाके लगाने लगा।

"लगता है कि मेरा नहीं, तुम्हारा दिमाग चल निकला है। ज़रा सोचो तो क्या मैं इस समय भागने की बात सोच सकता हूँ? बन्दूकें इसलिये उठाना चाहा था कि तुम्हें इन्हें उठाने में तकलीफ होगी।"

मर्यूत्का शान्त हो गई, मगर मधुर और गम्भीर ढंग से उसने कहा :

"सहायता के लिये धन्यवाद। मगर मुझे हुक्म दिया गया है कि तुम्हें हेड-क्वार्टर तक पहुचा दूँ... इसलिये जाहिर है कि तुम्हें बन्दूकें नहीं दे सकती, मुझपर तुम्हारी जिम्मेदारी जो है!"

लेफ़्टीनेण्ट ने कन्धे झटके और बोरे उठाकर आगे-आगे चल दिया।

बर्फ़ मिली रेत पैरों के नीचे चरमरा रही थी। नीचे, सुनसान और समतल तट का कोई ओर-छोर नहीं था। दूरी पर कोई भारी चीज़ बर्फ़ से ढकी हुई नज़र आई।

मर्यूत्का तीन बन्दूकों के बोझ से दबी जा रही थी।

"कोई बात नहीं, मरीया फिलातोव्ना, थोड़ी और हिम्मत रखो। ज़रूर यह बाड़ा ही है!"

"काश कि बाड़ा ही हो! मेरा तो दम निकला जा रहा है। ठण्ड से बिल्कुल अकड़ गई हूँ।"

वे बाड़े में दाखिल हुए। भीतर घुप अन्धेरा था। सभी ओर नमक लगी मछली और जंग लगे नमक की सड़ांध फैली हुई थी।

लेफ़्टीनेण्ट ने मछलियों के ढेर को हाथ से छुआ।

"ओह! मछली! कम से कम भूखों मरने की नौबत नहीं आयेगी।"

"काश रोशनी होती! चारों ओर देखना चाहिये। शायद हवा से बचने के लिये कोई कोना मिल जाये।" मर्यूत्का ने आह भर कर कहा।

"बिजली की आशा तो यहाँ नहीं की जा सकती।"

"मछली जलाई जाये... देखो तो इनमें कितनी चर्बी है।" लेफ्टिनेण्ट ने फिर ठहाका लगाया।

"मछली जलाई जाये? तुम तो सचमुच पागल हो गई हो।"

"वह क्यों?" मर्यूत्का ने खीझकर कहा। "वोल्गा तट पर हमारे यहाँ तो बहुत जलाई जाती हैं। लकड़ियों से बेहतर जलती हैं।"

"पहली बार सुन रहा हूँ... मगर जलायेंगे कैसे? मेरे पास चकमक तो है किन्तु चैलियाँ कहाँ से...."

"वाह रे सूरमा! समझ गयी कि माँ के घाघरे की छाया में ही उम्र गुजारी है। लो ये कारतूस फाड़ो और मैं दीवार से कुछ चैलियाँ छुड़ाती हूँ।"

बुरी तरह ठिठुरी हुई उँगलियों से लेफ़्टीनेण्ट ने बहुत कठिनाई से तीन कारतूस फाड़े। चैलियाँ लाते हुए मर्यूत्का अँधेरे में लेफ़्टीनेण्ट पर गिरते-गिरते बची।

"बारूद यहाँ छिड़को! एक ही जगह पर.... चकमक निकालो!"

चकमक से नारंगी शोला निकला। मर्यूत्का ने उसे बारूद के ढेर में घुसेड़ दिया। एक फुँकार-सी हुई, फिर धीरे-से पीली चिंगारियों की फुलझड़ी-सी छूटी और सूखी चैलियों में आग लगनी शुरू हुई।

"जल गई आग," मर्यूत्का खुशी से चिल्लाई, "मछलियाँ लाओ... सबसे अधिक चर्बीवाली।"

जलती हुई चैलियों पर उन्होंने ढंग से मछलियाँ जमाईं। शुरू में उनसे सूँ-सूँ की आवाज़ हुई और फिर चमकदार और गर्म-गर्म लपटें निकलने लगीं।

"अब सिर्फ़ ईंधन ही डालते जाना होगा। छः महीने तक मछलियाँ काफी रहेंगी!"

मर्यूत्का ने सभी ओर नज़र दौड़ाई। मछलियों के बड़े-बड़े ढेरों पर लपटों की नाचती हुई परछाइयाँ पड़ रही थीं। बाड़े की लकड़ी की दीवारों में दरारें और सूराख थे।

मर्यूत्का ने बाड़े का निरीक्षण किया। वह एक कोने से चिल्लाई :

"यहाँ एक सही-सलामत कोना है! आग में मछली और डाल दो कि बुझ न जाये। मैं यहाँ चारो ओर ओट कर दूँगी—बिल्कुल कमरे जैसा बन जायेगा।"

लेफ़्टीनेण्ट आग के पास सिकुड़कर बैठा गर्मी ले रहा था। मर्यूत्का कोने में मछलियाँ उठा-उठाकर फेंक रही थी। आखिर उसने पुकारकर कहा :

"तैयार हो गया! रोशनी लाओ!"

लेफ़्टीनेण्ट ने जलती हुई मछली दुम से पकड़कर उठाई। वह कोने में पहुँचा। मर्यूत्का ने तीन ओर से मछलियों की दीवार बना दी थी और बीच में थोड़ी-सी खाली जगह रह गई थी।

"यहाँ बैठकर आग जला लो। मैंने बीच में मछलियों का ढेर लगा दिया है। मैं तब तक रसद लाती हूँ।"

लेफ़्टीनेण्ट ने जलती हुई मछली मछलियों के ढेर के बीच टिका दी। आग बहुत धीरे-धीरे और मानो मन मारकर जली। मर्यूत्का वापस आई। उसने बन्दूक कोने में खड़ी कर दीं और बोरे ज़मीन पर रख दिये।

"ओह, मछली का हैजा! साथियों का अफ़सोस होता है। बेकार ही डूब गये।"

"अच्छा हो कि हम कपड़े सुखा लें। वरना ठण्ड लग जायेगी।"

"तो सुखाते क्यों नहीं? मछलियों की आग खूब तेज़ है। उतारो कपड़े, सुखाओ!"

लेफ़्टीनेण्ट झिझका।

"पहले तुम सुखा लो, मरीया फिलातोव्ना। मैं तब तक वहाँ इन्तज़ार करता हूँ। फिर मैं अपने कपड़े सुखा लूँगा।"

लेफ़्टीनेण्ट का काँपता हुआ चेहरा देखकर मयूत्का को उसपर तरस आया।

"देख रही हूँ कि तुम बिल्कुल बुद्धू हो। असली रईसजादे हो। तुम्हें डर किस बात का लगता है? क्या कभी कोई नंगी औरत नहीं देखी?"

"नहीं, यह बात नहीं है... मैंने सोचा कि शायद तुम्हें अच्छा न लगे।"

"बकवास है! हम सभी एक जैसे हाड़-मांस के बने हुए हैं। फर्क ही क्या है! कपड़े उतारो, बुद्धू!" वह चीख उठी, "तुम्हारे दाँत तो मशीनगन की तरह किटकिटा रहे हैं। तुम तो मेरे लिये बिल्कुल मुसीबत हो!"

बन्दूकों पर लटके हुए कपड़ों से भाप उठ रही थी।

लेफ़्टीनेण्ट और मर्यूत्का आग के सामने, एक दूसरे के सम्मुख बैठे थे और अपने को गर्मा रहे थे।

मर्यूत्का लेफ़्टीनेण्ट की गोरी-गोरी, कोमल और पतली-सी पीठ को बहुत ध्यान से और टकटकी बाँधकर देख रही थी। वह हुमकी।

"तुम ऐसे गोरे क्यों हो, मछली का हैजा! लगता है कि तुम्हें मलाई मल-मलकर नहलाया जाता रहा है!"

लेफ़्टीनेण्ट का चेहरा लज्जारुण हो उठा। उसने मर्यूत्का की ओर देखा, कुछ कहना चाहा, मगर मर्यूत्का की गोल-गोल छाती पर आग की पीली परछाइयाँ नाचती देखकर उसने अपनी नीली-नीली आँखें झुका लीं।

कपड़े सूख गये। मर्यूत्का ने कन्धे पर चमड़े की जाकेट डाल ली।

"अब सोना चाहिए। हो सकता है कि कल तक तूफ़ान खत्म हो जाये। यही खुशकिस्मती है कि नाव नहीं डूबी। शायद कभी न कभी सिर दरिया तक पहुँच ही जायेंगे। वहाँ मछुए मिल जायेंगे। तुम सो जाओ, मैं आग की देखभाल करूँगी। जब नींद से मेरी आँखें घुटने लगेंगी तो तुम्हें जगा दूँगी। इसी तरह हम बारी-बारी

से आग की रखवाली करेंगे।"

लेफ़्टीनेण्ट ने अपने कपड़े नीचे बिछाये और ऊपर से कोट ओढ़ लिया। वह सो तो गया, पर बेचैनी भरी नींद में वह बड़बड़ाता रहा। मर्यूत्का उसे टकटकी बाँधकर देखती रही।

फिर उसने कन्धे झटके।

"यह तो मेरे सिर आ पड़ा है! बड़ा ही नाजुक है! कहीं ठण्ड न लग गई हो इसे! घर पर तो शायद मखमल में ही लिपटा रहता होगा। ओह क्या चीज़ है यह ज़िन्दगी, मछली का हैजा!"

सुबह को जब छत की दरारों से रोशनी झाँकने लगी तो मर्यूत्का ने लेफ़्टीनेण्ट को जगाया।

"देखो, तुम आग का ध्यान करो और मैं तट की ओर जाती हूँ। देखकर आती हूँ कि कहीं हमारे साथी तैरकर निकल ही न आये हों और तट पर बैठे हों।"

लेफ़्टीनेण्ट बड़ी मुश्किल से उठा। सिर हाथों में थामकर उसने डूबती-सी आवाज़ में कहा :

"सिर में दर्द है।"

"कोई बात नहीं... यह तो धुएँ और थकान का नतीजा है। ठीक हो जायेगा। बोरे से रोटी निकाल लो, मछली भून लो और खा लो।"

मर्यूत्का ने बन्दूक उठाई, जाकेट से साफ़ की और चल दी।

लेफ़्टीनेण्ट घुटनों के बल रेंगकर आग के पास पहुँचा। उसने बोरे से भीगी हुई रोटी निकाली, रोटी का टुकड़ा काटा, थोड़ा-सा चबाया और बाकी उसके हाथ से नीचे गिर गया। फिर वह आग के करीब फर्श पर ही ढह पड़ा।

मर्यूत्का ने लेफ़्टीनेण्ट का कन्धा झकझोरा और बेबसी में चीखकर कहा :

"उठो! बेड़ा गर्क! मुसीबत!"

लेफ़्टीनेण्ट की आँखें फैल गईं, होंठ खुले रह गये।

"उठो, कह रही हूँ! मुसीबत आ गई! लहरें नाव बहा ले गईं! हम तो अब कहीं के न रहे।"

लेफ़्टीनेण्ट उसका मुँह ताकता हुआ खामोश रहा।

मर्यूत्का ने उसे ध्यान से देखा और आह भरी।

लेफ़्टीनेण्ट की नीली आँखें धुँधली-धुँधली और खाली-खाली-सी नज़र आ रही थीं। बदहवासी में उसका गाल मर्यूत्का के हाथ पर आ रहा। वह अँगारे की

तरह जल रहा था।

"अरे, हिम्मत हारने वाले, तो तुझे ठण्ड लग ही गई! अब मैं करूँ तो क्या?" लेफ़्टीनेण्ट के होंठ कुछ फुसफुसाये।

मर्यूत्का झुककर सुनने लगी :

"मिखाईल इवानोविच... मुझे बुरे अंक नहीं दीजियेगा... मैं पाठ याद नहीं कर पाया... कल तैयार कर लूँगा..."

"यह तुम क्या बक रहे हो?" मर्यूत्का ने तनिक झिझकते हुए पूछा।

"अरे... लेना इसे... जंगली मुर्गा..." लेफ़्टीनेण्ट अचानक चिल्लाया और एकबारगी उछल पड़ा।

लेफ़्टीनेण्ट फिर गिर गया और उँगलियों से रेत खुरचने लगा।

मर्यूत्का पीछे हट गई और उसने हाथों से मुँह ढक लिया।

वह जल्दी-जल्दी कुछ अंट-शंट बके जा रहा था।

मयूत्का ने निराशा से चारों ओर नज़र दौड़ाई।

उसने जाकेट उतारकर ज़मीन पर फेंक दी और लेफ़्टीनेण्ट के चेतनाहीन शरीर को बड़ी कठिनाई से घसीटकर उसपर लाई। फिर उसे कोट से ओढ़ा दिया।

वह अपने को सर्वथा असहाय अनुभव करती हुई झुककर उसके निकट बैठ गई। उसके दुबले-पतले गालों पर धीरे-धीरे धुँधलाई आँखों से आँसू लुढ़कने लगे।

लेफ़्टीनेण्ट करवटें लेता हुआ कोट को बार-बार उतारकर फेंक देता था। मगर मर्युत्का हर बार उसे ठोड़ी तक ढक देती थी।

मर्यूत्का ने देखा कि लेफ़्टीनेण्ट का सिर एक तरफ़ को लुढ़क गया है। उसने उसके सिर के नीचे बोरे रख दिये। उसने ऊपर, मानो आकाश को सम्बोधित करते हुए दर्दभरी आवाज़ में कहा :

"अगर यह मर गया... तो मैं येव्स्युकोव को क्या जवाब दूँगी? हाय, क्या मुसीबत है!"

वह बुखार से जलते हुए लेफ़्टीनेण्ट के शरीर पर झुक गई और उसने उसकी धुँधलाई हुई नीली आँखों में झाँका।

मर्यूत्का के दिल को ठेस लगी। उसने हाथ बढ़ाकर लेफ़्टीनेण्ट के उलझे हुए घुँघराले बालों को धीरे से सहलाया। उसका सिर अपने हाथों में लेकर वह कोमल स्वर में फुसफुसाई :

"नीली आँखोंवाले मेरे बुद्धू!"

सातवां अध्याय

शुरू में पहेली, अन्त में बिल्कुल साफ़

चाँदी की नफीरियाँ, नफीरियों पर लगी हुई घण्टियाँ।

नफीरियाँ बजती हैं, घण्टियाँ टनटनाती हैं, बर्फ़ जैसी कोमल टनटनाहट पैदा करती हुई :

टन-टनाटन-टन,

टन-टनाटन-टन।

नफीरियाँ गूँजती हैं :

तू-तू-तू-तड़,

तू-तू-तू-तड़।

यह साफ़ तौर पर फ़ौजी मार्च है। बेशक मार्च है, वही जो हमेशा परेड के समय होता है।

मैदान भी वही है, जिसमें मेपल के वृक्षों की हरी-हरी रेशमी पत्तियों से छनकर आने वाली धूप फैली हुई है।

बैंडमास्टर बैंड का निर्देशन कर रहा है।

बैंडमास्टर बैंड की पीठ करके खड़ा है और उसके लम्बे कोट की काट से दुम बाहर निकली हुई है, लोमड़ी की-सी बड़ी लाल दुम। दुम के सिरे पर सुनहरा गेंद है और गेंद में कामेरटोन लगा है।

दुम इधर-उधर हिल-डुल रही है, कामेरटोन बाजों को संकेत देता है और यह भी बताता है कि ताशे और बिगुल कब बजें। जब कोई वादक किसी सोच में डूब जाता है तो उसके माथे पर तड़ से कामेरटोन लगता है।

बैंडवाले अपनी पूरी कोशिश से बैंड बजा रहे हैं। बैंडवाले बहुत अजीब-से हैं।

बैंड बजानेवाले मामूली और विभिन्न रेजीमेण्टों के सिपाही हैं। यह पूरी फ़ौज का बैंड है।

मगर बैंड बजानेवालों के मुँह नहीं हैं... नाकों के नीचे बिल्कुल सपाट जगह है। नफीरियाँ उनके बायें नथनों में घुसी हुई हैं।

वे दायें नथनों से साँस लेते हैं, बायें नथनों से नफीरियाँ बजाते हैं। नफीरियों

से विशेष प्रकार की आवाज़ निकलती है, झनझनाती हुई और मन को बहलाती हुई।

"अटेंशन!"

बन्दूक-कन्धे पर

"रेजीमेण्ट!"

"बटालियन!"

"कम्पनी!"

"बटालियान नम्बर एक—फारवर्ड मार्च!"

नफीरियाँ :

तू-तू-तू-तड़ू।

घण्टियाँ :

टन-टन-टन।

काले चमकदार जूते पहने हुए कप्तान श्वेत्सोव बड़ी शान से नाचता है। कप्तान के कसे हुए और चिकने कूल्हे सूअर के लोथड़े के समान हैं। उसके पाँव ताल दे रहे हैं—धप-धप।

"बहुत खूब जवानो!"

"ढम-ढम-ढम!"

"लेफ़्टीनेण्ट!"

"लेफ़्टीनेण्ट! जनरल साहब आपको याद कर रहे हैं!"

"किस लेफ़्टीनेण्ट को?"

"तीसरी कम्पनी के! लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक को जनरल साहब याद कर रहे हैं!"

जनरल घोड़े पर सवार है, घोड़ा चौक के बीचोंबीच खड़ा है। जनरल का चेहरा लाल और मूँछें पकी हुई हैं।

"लेफ़्टीनेण्ट, यह क्या हिमाकत है?"

"ही-ही-ही! हा-हा-हा!"

"क्या दिमाग चल निकला है? हँसने की जुर्रत? मैं तुम्हारा दिमाग ठिकाने कर... तुम किससे बात कर रहे हो?"

"हो-हो-हो! अरे हाँ, आप जनरल नहीं, बिल्ला हैं, हुज़ूर!"

जनरल घोड़े पर सवार है। जनरल कमर तक तो जनरल है और उसके नीचे का धड़ बिल्ले का है। किसी अच्छी नसल के बिल्ले का भी नहीं, हर घर के

पिछवाड़े में नज़र आनेवाले साधारण नसल के मटमैले और धारीदार बिल्ले का। वह अपने पंजों से रकाबों को दबाये है।

"मैं तुम्हारा कोर्ट-मार्शल करूँगा लेफ़्टीनेण्ट! कैसी अनसुनी बात है! गार्ड का अफसर और उसकी नाभि बाहर निकली हुई हो!"

लेफ़्टीनेण्ट ने नज़र झुकाकर देखा और उसका मानो दम निकल गया। उसके कमरबन्द के नीचे से नाभि बाहर निकली हुई थी, पतली-पतली और हरी-हरी। नाभि आश्चर्यचकित करने वाली तेजी से घूम रही थी... उसने अपनी नाभि पकड़ी, मगर वह फिसल गई।

"गिरफ्तार कर लो इसे! इसने शपथ की अवहेलना की है!"

जनरल ने रकाब से पंजा निकाला, नाखून खोले और लेफ़्टीनेण्ट की तरफ़ बढ़ायें। पंजे में रुपहली एड़ लगी हुई थी और उसकी एक कड़ी की जगह एक आँख जड़ी हुई थी।

साधारण आँख। गोल, पीली पुतली और ऐसी पैनी कि लेफ़्टीनेण्ट के दिल में उतरती चली गई।

इस आँख ने प्यार से आँख मारी और लगी कुछ कहने। आँख कैसे बोलने लगी, यह कोई नहीं जानता, मगर वह बोल रही थी :

"नहीं डरो! नहीं डरो! आखिर होश में आ गया!"

एक हाथ ने लेफ़्टीनेण्ट का सिर ऊपर उठाया। लेफ़्टीनेण्ट ने आँखें खोल दीं। उसने एक दुबला-पतला-सा चेहरा देखा, जिस पर लाल लटें लटकी हुई थीं। और आँख प्यार भरी और पीली थी, बिल्कुल वैसी ही जैसी कि उसने एड़ में जड़ी हुई देखी थी।

"अरे जालिम, तुमने तो मुझे बिल्कुल ही डरा दिया था। पूरे हफ़्ते-भर से तुम्हारे सिरहाने बैठी परेशान हो रही हूँ। मुझे तो लग रहा था कि तुम चल बसोगे। इस द्वीप पर हम एकदम एकाकी हैं। न कोई दवादारू है, न किसी तरह की कोई मदद। उबलते पानी का ही शुक्र। शुरू में तो तुम वह भी उगल देते थे... खराब, नमकीन पानी को अन्तड़ियाँ स्वीकार नहीं करती थीं।"

लेफ़्टीनेण्ट बहुत ही कठिनाई से प्यार और चिन्ता के ये शब्द समझ पाया। उसने सिर उठाया और इस तरह इधर-उधर देखा मानो कुछ भी समझ न पा रहा हो।

सभी ओर मछलियों के ढेर थे। आग जल रही थी, गज पर केतली लटक रही थी, पानी उबल रहा था।

"यह सब क्या है? कहाँ हूँ मैं?"

"अरे भूल गये? नहीं पहचानते? मैं मर्यूत्का हूँ!"

लेफ़्टीनेण्ट ने अपने नाज़ुक और पीले हाथ से माथे को रगड़ा।

उसे सब कुछ याद हो आया, वह धीरे से मुस्कराया और फुसफुसाया :

"हाँ... याद आया। राबिन्सन और फ्रायडे!"

"लो फिर बहक चले? यह फ्रायडे तो तुम्हारे दिमाग में जमकर बैठ गया है। मालूम नहीं कि आज कौन-सा दिन है। मैं तो इनका हिसाब ही भूल गई हूँ।"

लेफ़्टीनेण्ट फिर मुस्कराया।

"दिन नहीं! यह तो नाम है... ऐसी एक कहानी है कि जहाज टूट जाने के बाद एक आदमी एक वीरान द्वीप पर जा पहुँचा। वहाँ उसका एक दोस्त बना। उसका नाम था फ्रायडे। कभी नहीं पढ़ी यह कहानी तुमने?" वह जाकेट पर ढह पड़ा और खाँसने लगा।

"नहीं... कहानियाँ तो बहुत पढ़ी हैं, मगर यह नहीं। तुम आराम से लेटे रहो, हिलो-डुलो नहीं। वरना फिर से बीमार हो जाओगे। मैं कुछ मछलियाँ उबालती हूँ। खाने से बदन में जान आ जायेगी। पूरे हफ़्ते भर पानी के सिवा तुम्हारे मुँह में एक दाना भी तो नहीं गया। देखो तो बिल्कुल सफ़ेद हो गये हो, मोम की तरह। लेटे रहो!'

लेफ़्टीनेण्ट ने सुस्ती अनुभव करते हुए आँखें बन्द कर लीं। उसके सिर में धीरे-धीरे बिल्लौरी घण्टियाँ बज रही थीं। उसे बिल्लौरी घंटियों वाली नफीरियों की याद हो आई। वह धीरे से हँस दिया।

"क्या बात है?" मर्यूत्का ने पूछा।

"ऐसे ही कुछ याद आ गया... सरसाम की हालत में एक अजीब-सा सपना देखा था।"

"तुम सपने में कुछ चिल्लाते रहे थे। तुम लगातार आर्डर देते थे, डाँटत-डपटते थे.... क्या कुछ नहीं हुआ! हवा सीटियाँ बजाती थी, सभी ओर वीराना था और मैं द्वीप पर तुम्हारे साथ अकेली थी और तुम होश में नहीं थे। डर के मारे मेरा दम निकला जा रहा था।" वह सिहर उठी। "समझ में नहीं आ रहा कि क्या करूँ।"

"तो कैसे तुमने काम चलाया?"

"बस जैसे-तैसे चला ही लिया काम। सबसे ज़्यादा डर तो मुझे इस बात का था कि तुम भूख से मर जाओगे। पानी के सिवा कुछ भी तो नहीं। बची-बचायी रोटी को ही पानी में उबालकर तुम्हें पिलाती रही। अब तो सिर्फ़ मछली ही बच गयी है। नमकीन मछली बीमार के लिये क्या मानी रखती है? मगर जैसे ही यह देखा कि तुम होश में आ रहे हो आँखें खोल रहे हो तो मेरे मन का बोझ हल्का हो गया।"

लेफ़्टीनेण्ट ने अपना हाथ बढ़ाया। धूल-मिट्टी से लथपथ होने के बावजूद सुन्दर और पतली-पतली उँगलियाँ उसने मर्यूत्का की बाँह पर रख दीं। धीरे से उसकी बाँह थपथपाते हुए लेफ़्टीनेण्ट ने कहा :

"धन्यवाद, प्यारी!"

मर्यूत्का के चेहरे पर लाली दौड़ गयी और उसने लेफ़्टीनेण्ट का हाथ हटा दिया।

"आभार प्रकट नहीं करो। धन्यवाद की कोई आवश्यकता नहीं। तुम क्या सोचते हो कि अपनी आँखों के सामने आदमी को मरने दिया जा सकता है? मैं जानवर हूँ या इंसान?"

"मगर मैं तो... तुम्हारा दुश्मन हूँ। मुझे बचाने की तुम्हें क्या पड़ी थी? खुद तुममें जान नहीं रह गई।"

मर्यूत्का घड़ी भर को चुप रही, उलझन में उलझी हुई सी। फिर उसने हाथ हिलाया और हँस दी।

"दुश्मन? हाथ तक तो उठा नहीं सकते। बड़े आये दुश्मन! मेरी किस्मत में यही लिखा था। गोली तुम पर सीधी नहीं बैठी। निशाना चूक गया, सो भी ज़िन्दगी में पहली बार। अब तुम्हारे लिये लगातार परेशान होना पड़ेगा। लो, खाओ!"

मर्यूत्का ने लेफ़्टीनेण्ट की ओर पतीली बढ़ाई। उसमें चर्बीवाली सुनहरी मछली तैर रही थी। मछली की हल्की-हल्की और प्यारी-प्यारी गन्ध आ रही थी।

लेफ़्टीनेण्ट ने पतीली से मछली के टुकड़े निकाले। मजे लेते हुए वह खाने लगा।

"बेहद नमकीन है। गला जला जा रहा है।"

"कोई चारा नहीं इसका। अगर मीठा पानी होता तो मछली को उसमें डालकर नमक निकाल लिया जाता। मगर बदकिस्मती कि वह भी नहीं है। मछली नमकीन, पानी भी नमकीन! कैसी मुसीबत है, मछली का हैजा!"

लेफ़्टीनेण्ट ने पतीली एक तरफ़ हटा दी।

"क्या हुआ? और नहीं खाओगे क्या?"

"नहीं। मैं खा चुका। तुम खाओ।"

"गोली मारो इसे, हफ़्ते-भर यही तो खाती रही हूँ। गले में अटककर रह गई है यह मेरे।"

लेफ़्टीनेण्ट कोहनी के बल लेटा था।

"काश... सिगरेट होती!" उसने आह भरकर कहा।

"सिगरेट? तो कहा क्यों नहीं मुझसे? सेम्यान्नी के थैले से मुझे कुछ तम्बाकू मिला है। थोड़ा भीग गया था, पर मैंने उसे सुखा लिया है। जानती थी कि तुम तम्बाकूनोशी करना चाहोगे। बीमारी के बाद सिगरेट पीने की चाह और भी बढ़ जाती है। यह लो।"

लेफ़्टीनेण्ट के मन पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसने काँपती उँगलियों से तम्बाकू की थैली ले ली।

"तुम तो हीरा हो, मर्यूत्का! धाय से बढ़कर हो!"

"धाय के बिना जी ही नहीं सकते?" उसने रुखाई से जवाब दिया और उसके गाल लाल हो गये।

"अब तम्बाकू लपेटने के लिये कागज नहीं। तेरे उस गुलाबी मुँह ने मेरे सभी कागज छीन लिये थे और पाइप मैं खो बैठा हूँ"

"कागज..." मर्यूत्का सोचने लगी।

फिर निर्णायक झटके के साथ उस जाकेट की ओर मुड़ी, जो लेफ़्टीनेण्ट ओढ़े था। उसने जाकेट की जेब में हाथ डालकर एक छोटा-सा बण्डल निकाला।

उसने बंडल खोलकर उसमें से कुछ कागज निकाले और लेफ़्टीनेण्ट की ओर बढ़ाये।

"यह लो।"

लेफ़्टीनेण्ट ने कागज लिये और उन्हें ध्यान से देखा। फिर मर्यूत्का की ओर नज़र उठाई। उसकी आँखों की नीलिमा में हैरानी-परेशानी चमक रही थी।

"ये तो तुम्हारी कविताएँ हैं! तुम्हारा दिमाग चल निकला है क्या? मैं नहीं लूँगा!"

"ले लो, तुम पर शैतान की मार! मेरा दिल नहीं दुखाओ, मछली का हैजा!" मर्यूत्का चिल्लाई।

लेफ़्टीनेण्ट ने गौर से उसकी तरफ़ देखा।

"धन्यवाद! मैं यह कभी नहीं भूलूँगा!"

उसने कागज के सिरे से एक छोटा-सा टुकड़ा फाड़ा, तम्बाकू लपेटकर सिगरेट

बनाई और धुआँ उड़ाने लगा। फिर सिरगेट के नीले धुएँ के घेरे के बीच से कहीं दूर देखने लगा।

मर्यूत्का उसे टकटकी बाँधकर देखती रही। फिर अप्रत्याशित ही उसने कहा :

"मैं तुम्हें देखती हूँ और एक बात किसी तरह भी समझ नहीं पाती। तुम्हारी आँखें ऐसी नीली क्यों हैं? ज़िन्दगी में कभी ऐसी आँखें नहीं देखीं। ऐसी नीली हैं तुम्हारी आँखें कि आदमी इनमें डूब सकता है।"

"मालूम नहीं," लेफ़्टीनेण्ट ने जवाब दिया, "जन्म से ही ऐसी हैं। बहुत-से लोगों ने मुझसे कहा कि इनका रंग असाधारण है।"

"हाँ, यह सच है! तुम्हारे कैदी बनाये जाने के कुछ ही देर बाद मैंने सोचा कि इसकी आँखें ऐसी क्यों हैं। खतरनाक हैं तुम्हारी ये आँखें!"

"किसके लिये?"

"औरतों के लिये। अनजाने ही मन में उतर जाती हैं। उसे मोह लेती हैं।"

"तुम्हें भी मोह लिया क्या?"

मर्यूत्का भड़क उठी।

"देखो तो शैतान को! राज जानना चाहता है। लेटे रहो, मैं पानी लाने जा रही हूँ।"

मर्यूत्का उठी, उसने लापरवाही से केतली उठाई, मगर मछलियों के ढेर से आगे जाकर खुशी से मुड़ी और पहले की भाँति बोली :

"मेरे नीली आँखोंवाले बुद्धू!"

आठवाँ अध्याय

जिसके लिये किसी व्याख्या की आवश्यकता नहीं

मार्च की धूप है--वातावरण में वसन्त का रंग।

मार्च की धूप अराल सागर पर फैली हुई है—नज़र की हद तक नीली मखमल पर। चिलचिलाती धूप अपने तेज दाँतों से काटती-सी लगती है, आदमी का खून मानो उबल-उबल पड़ता है।

अब तीन दिनों से लेफ़्टीनेण्ट बाहर निकलता है।

वह बाड़े के बाहर बैठकर धूप सेंकता है, अपने चारों ओर देखता है। उसकी आँखों में अब खुशी झलकती है, उनमें चमक आ गई है और वे नीले सागर की तरह नीली नज़र आती हैं। इसी बीच मर्यूत्का ने सारा द्वीप छान डाला है।

अपनी इस छान-बीन के आखिरी दिन वह सूर्यास्त के समय खुश-खुश लौटी।

"सुनते हो! कल हम यहाँ से जा रहे हैं!"

"कहाँ?"

"वहाँ, कुछ दूरी पर! यहाँ से कोई आठ किलोमीटर के फ़ासले पर।"

"वहाँ क्या है?"

"मछुओं की झोंपड़ी मिल गई है। यूँ समझो कि बस महल है! बिल्कुल खुश्क और ठीक-ठीक है। खिड़कियों का मजबूत शीशा तक सही-सलामत है। उसमें तन्दूर और मिट्टी के कुछ टूटे-फूटे बर्तन भी हैं। वे सब काम आ जायेंगे। सबसे बड़ी बात तो यह है कि सोने के लिये तख्ते लगे हुए हैं। अब ज़मीन पर लोटने-पोटने की ज़रूरत नहीं रहेगी। हमें तो शुरू में ही वहाँ जाना चाहिये था।"

"मगर यह मालूम ही किसे था?"

"यही तो बात है! इतना ही नहीं, एक और खोज कर डाली है मैंने। बढ़िया खोज!"

"वह क्या है?"

"तन्दूर के पीछे खाने-पीने का कुछ सामान भी है। रसद छिपी हुई है। बहुत नहीं है। चावल है और कोई आठ-दस सेर आटा। आटा कुछ खराब हो गया है, मगर खैर खाया जा सकता है। लगता है कि पतझर में जैसे ही तूफ़ान आता देखा होगा, मछुओं ने वहाँ से भागने की जल्दी की होगी और हड़बड़ी में रसद समेटना भूल गये होंगे। अब खूब मजे रहेंगे हमारे!"

अगली सुबह वे नयी जगह के लिये चल दिये। ऊँट की तरह लदी-लदायी मर्यूत्का आगे-आगे चल रही थी। उसने सभी कुछ अपने ऊपर लाद लिया था, लेफ़्टीनेण्ट को कुछ भी नहीं उठाने दिया था।

"रहने दो! कहीं फिर बीमार पड़ गये तो! लेने के देने पड़ जायेंगे। तुम कोई फ़िक्र मत करो! देखने में बेशक दुबली-पतली, मगर मजबूत हूँ!"

दोपहर तक वे दोनों अपनी मंजिल पर पहुँच गये। उन्होंने बर्फ़ हटाई और दरवाजे को कब्जों में लगाकर खड़ा किया। उन्होंने तन्दूर को मछलियों से भरकर जलाया और आग तापने लगे। उनके चेहरों पर सुखद मुस्कान खेल रही थी।

"वाह.... क्या शाही ठाठ हैं!"

"बहुत खूब हो तुम मर्यूत्का! उम्र भर तुम्हारा एहसान मानूँगा... तुम न होतीं तो दम निकल गया होता।"

"सो तो जाहिर है, शाहजादे!"

वह चुप होकर आग पर हाथ तापने लगी।

"गर्म है, खूब गर्म है... हाँ तो अब हम आगे क्या करेंगे?"

"क्या करेंगे? इन्तज़ार!"

"किस चीज़ का?"

"वसन्त का। थोड़ा ही समय रह गया है—आधा मार्च गुजर चुका है। बस यही कोई दो हफ़्तों की और देर है। सम्भवतः तब मछुए यहाँ अपनी मछलियों के लिये आयेंगे और हमें उस पार पहुँचायेंगे।"

"काश, ऐसा ही हो। मछलियों और सड़े हुए आटे के सहारे हम बहुत दिनों तक ज़िन्दा नहीं रह सकेंगे। दो हफ़्ते और जी लेंगे, और तब खेल खत्म, मछली का हैजा!"

"यह तुम क्या मुहावरा बोला करती हो, हर वक्त 'मछली का हैजा'? कहाँ सीखा तुमने इसे?"

"अपने अस्त्रखान में। मछुए इसी तरह बातचीत करते हैं। गाली-गलौज की जगह। गाली-वाली देना मुझे पसन्द नहीं। जब कभी गुस्सा आता है तो यही कहकर दिल की भड़ास निकाल लेती हूँ।"

उसने बन्दूक के गज से तन्दूर में मछलियाँ हिलाईं और कहा :

"अरे हाँ, तुमने कभी मुझसे एक कहानी की चर्चा की थी, किसी द्वीप के बारे

में... फ्रायडे के सम्बन्ध में। योंही बेकार बैठे रहने से यही अच्छा है कि वह कहानी सुनाओ। दीवानी हूँ मैं तो कहानियों की! ऐसा होता था कि गाँव की औरतें मेरी मौसी के घर जमा होती थीं और गुगनीखा नाम की एक बुढ़िया को भी अपने साथ लाती थीं। सौ बरस या शायद इससे भी उम्र थी उसकी। नेपोलियन के रूस आने तक की याद थी उसे। जैसे ही वह कहानी कहना शुरू करती, मैं कोने में ही बैठी रह जाती थी। साँस तक न लेती थी कि कहीं कोई शब्द न छूट जाये।"

"तुम राबिन्सन क्रूसो की कहानी सुनाने को कह रही हो न? आधी कहानी तो मैं भूल चुका हूँ। एक जमाने पहले की पढ़ी थी।"

"तुम याद करने की कोशिश करो। जितनी याद आ जाये, उतनी ही सुना दो।"

"अच्छा, कोशिश करता हूँ।"

लेफ़्टीनेण्ट ने कहानी याद करते-करते ज़रा आँखें मूँद लीं।

मर्यूत्का ने सोनेवाले तख्ते पर अपनी चमड़े की जाकेट बिछा ली और तन्दूर के निकटवाले कोने में बैठ गई।

"यहाँ आ जाओ, यहाँ कोने में ज़्यादा गर्मी है।"

लेफ़्टीनेण्ट कोने में जा बैठा। तन्दूर खूब गर्म हो चुका था, उससे सुखद गर्मी आ रही थी।

"अरे, तुम शुरू करो न। जान देती हूँ मैं इन कहानियों पर!"

लेफ़्टीनेण्ट ने ठुड्डी पर हाथ रखा और कहानी कहनी शुरू की :

"लिवरपूल नगर में एक अमीर आदमी रहता था। उसका नाम था राबिन्सन क्रूसो..."

"यह नगर कहाँ है?"

"इंगलैण्ड में... हाँ, तो वहाँ एक धनी रहता था, राबिन्सन क्रूसो..."

"ज़रा रुको! अमीर आदमी कहा न तुमने? ये सारी कहानियाँ अमीरों और बादशाहों के बारे में ही क्यों होती हैं? ग़रीबों के बारे में कहानियाँ क्यों नहीं होतीं?"

"मालूम नहीं," लेफ़्टीनेण्ट ने हतप्रभ होते हुए जवाब दिया, "मैंने कभी इसके बारे में सोचा नहीं।"

"ज़रूर इसलिये कि अमीरों ने ही ये कहानियाँ लिखी होंगी। मुझ ही को ले लो। कविता रचना चाहती हूँ, मगर इसके लिये मेरे पास ज्ञान की कमी है। खूब

बढ़िया ढंग से लिखती मैं ग़रीबों के बारे में। खैर कोई बात नहीं। पढ़-लिख जाऊँगी, तब लिखूँगी।"

"हाँ तो... इस राबिन्सन क्रूसो के दिमाग़ में दुनिया के गिर्द चक्कर लगाने की बात आई। वह देखना चाहता था कि और लोग कैसे रहते-सहते हैं। वह पालोंवाले एक बड़े जहाज में अपने नगर से चला..."

तन्दूर में आग चटक रही थी, लेफ़्टीनेण्ट रवानी से कहानी कह रहा था।

धीरे-धीरे उसे सारी कहानी, छोटी-छोटी तफसीलें भी याद आती जा रही थीं।

मर्यूत्का दम साधे बैठी थी। कहानी के सबसे प्रभावपूर्ण अंशों पर वह निहायत ही खुशी से आह भरती।

लेफ़्टीनेण्ट ने जब राबिन्सन क्रूसो के जहाज की दुर्घटना की चर्चा की तो मर्यूत्का ने घृणा से कन्धे झटके और पूछा :

"इसका मतलब यह है कि राबिन्सन क्रूसो के सभी साथी मर गये?"

"हाँ, सभी।"

"तब तो ज़रूर जहाज के कप्तान के भेजे में भूसा भरा था या फिर दुर्घटना के पहले वह बहुत पी गया था। मैं तो हरगिज यह मानने को तैयार नहीं कि कोई अच्छा कप्तान अपने जहाजियों को इस तरह मरने देगा। कास्पियन सागर में कई बार हमारे जहाज इसी तरह दुर्घटना के शिकार हुए हैं और दो-तीन से ज़्यादा आदमी कभी नहीं डूबे, बाकी सभी को बचा लिया गया।"

"यह तुम कैसे कह सकती हो? हमारे सेम्यान्नी और व्याखिर भी तो डूब गये हैं न! इसका मतलब यह है कि तुम बहुत घटिया कप्तान हो या फिर दुर्घटना के पहले तुमने बहुत चढ़ा ली थी?"

मर्यूत्का हक्का-बक्का रह गई।

"चारों खाने चित कर दिया तुमने, मछली का हैजा! अच्छा, आगे सुनाओ कहानी!"

फ्रायडे से भेंट होने का जब जिक्र आया तो मर्यूत्का ने फिर टोका :

"हाँ तो अब समझी कि तुमने मुझे फ्रायडे क्यों कहा था? तुम खुद मानो राबिन्सन ही हो न?"

जब समुद्री डाकुओं के हमले का जिक्र आया तो मर्यूत्का की आँखें चमक उठीं और उसने लेफ़्टीनेण्ट से कहा :

"एक पर दस टूट पड़े? बहुत बुरी बात थी न यह तो, मछली का हैजा!"

लेफ़्टीनेण्ट ने आखिर कहानी खत्म की।

मर्यूत्का लेफ़्टीनेण्ट के कन्धे से टेक लगाये हुए मानो जादू में बँधी-सी बैठी रही। उसने जैसे कि स्वप्न में कहा :

"खूब है। सम्भवतः तुम बहुत कहानियाँ जानते हो? एक दिन एक कहानी कहा करो।"

"क्या सचमुच तुम्हें अच्छी लगी?"

"बहुत ही अच्छी। इस तरह हर शाम जल्दी-जल्दी बीत जायेगी। समय का पता भी नहीं लगेगा।"

लेफ़्टीनेण्ट ने जम्हाई ली।

"नींद आ रही है क्या?"

"नहीं... बीमारी के बाद कमज़ोर हो गया हूँ।"

"हाय, बेचारा!"

मर्यूत्का ने फिर प्यार से उसके बाल थपथपाये। लेफ़्टीनेण्ट ने हैरान होकर अपनी नीली आँखें उसकी ओर उठाईं।

उन आँखों में कुछ ऐसी गर्मी थी, जो मर्यूत्का के हृदय की गहराइयों तक को छू गई। वह अपनी सुध-बुध भूल गई, झुकी और अपने खुश्क तथा फटे हुए होंठ लेफ़्टीनेण्ट के कमज़ोर और खूँटियों से भरे हुए गाल पर रख दिये।

नौवाँ अध्याय

जो यह प्रमाणित करता है कि
हृदय यद्यपि किसी नियम-क़ानून को
नहीं मानता तथापि मनुष्य की चेतना
यथार्थ से मुँह नहीं मोड़ सकती

मर्यूत्का के अचूक निशाने के शिकार होनेवालों की सूची में सफ़ेद गार्ड के लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक का नम्बर इकतालीसवाँ होना चाहिये था।

मगर हुआ यह कि मर्यूत्का की खुशियों की सूची में उसका स्थान पहला हो गया।

मर्यूत्का जी-जान से लेफ़्टीनेण्ट पर मर-मिटी, उसके पतले-पतले हाथों पर, उसकी प्यारी-मधुर आवाज़ पर और सबसे ज़्यादा तो उसकी असाधारण नीली आँखों पर।

उनकी नीलिमा से ज़िन्दगी जगमगा उठी।

वह अराल सागर की ऊब भूल गई, नमकीन मछली और सड़े हुए आटे के उबकाई लाने वाले जायके का भी उसे ध्यान नहीं रहा। काले पानी के विस्तार से परे जीवन की रेल-पेल में हिस्सा लेने की अदम्य और तीव्र चाह भी अब मिट गई। दिन के समय वह साधारण काम-काज करती—रोटियाँ पकाती और उबकाई पैदा करने वाली मछली उबालती, जिसकी वजह से उनके मसूड़े सूज गये थे। कभी-कभी वह तट पर जाकर यह भी देख लेती कि लहरों पर कहीं वह पाल तो उनकी ओर नहीं आ रहा, जिसका इन्तज़ार था।

शाम को जब वसन्त के आकाश से कंजूस सूरज अपना किरणजाल समेटने लगता तो वह अपने कोनेवाले तख़्ते पर जा बैठती। वह लेफ़्टीनेण्ट के कन्धे पर अपना सिर टिका देती और कहानी सुनती।

बहुत-सी कहानियाँ सुनाईं लेफ़्टीनेण्ट ने। अच्छा कमाल हासिल था उसे कहानियाँ कहने में।

दिन बीतते गये, लहरों की तरह धीरे-धीरे, बोझिल-बोझिल-से।

एक दिन लेफ़्टीनेण्ट झोंपड़ी की देहली पर बैठा, धूप खाता हुआ मर्यूत्का की

उँगलियों की ओर देख रहा था, जो अभ्यस्त होने के कारण बड़ी फुर्ती से एक मोटी मछली को साफ़ कर रही थी। लेफ़्टीनेण्ट ने आँखें झपकायीं और कन्धे झटककर कहा :

"हुँह... बिल्कुल बकवास है! जहन्नुम में जाये!"

"क्या हुआ प्यारे?"

"मैं कहता हूँ सब बकवास है... सारी ज़िन्दगी ही फिज़ूल है। प्राथमिक संस्कार, लादे गये विचार। बिल्कुल बकवास! तरह-तरह के रस्मी नाम, उपाधियाँ! गार्ड का लेफ़्टीनेण्ट? भाड़ में जाये गार्ड का लेफ़्टीनेण्ट! मैं जीना चाहता हूँ। सत्ताईस बरस तक जी चुका, लेकिन सच यह है कि जीकर तो बिल्कुल देखा ही नहीं। बेतहाशा दौलत लुटाई, किसी आदर्श की खोज में देश-विदेश भटका, मगर मेरे हृदय में किसी कमी, किसी असन्तोष की जानलेवा आग धधकती रहीं। अब सोचता हूँ कि अगर तब कोई मुझे यह कहता कि अपने जीवन के सबसे भरपूर दिन मैं इस बेहूदा सागर के बीच, इस चपाती की शक्ल वाले द्वीप पर गुजारूँगा तो मैं कभी विश्वास न करता।"

"क्या कहा तुमने, कैसे दिन?"

"सबसे ज़्यादा भरपूर। नहीं समझी? कैसे कहूँ कि तुम आसानी से समझ जाओ? ऐसे दिन, जब सारी दुनिया के विरुद्ध मैं अकेला ही अपने को मोर्चा लेता हुआ अनुभव नहीं कर रहा हूँ, जब मुझे अकेले ही संघर्ष नहीं करना पड़ रहा है। मैं इस समूचे वातावरण में खोकर रह गया हूँ।" उसने अपनी बाँहें फैलाकर मानो समूचे वातावरण को उनमें समेट लिया। "ऐसे लगता है मानो मैं इस सारे वातावरण का अभिन्न अंग बन गया हूँ। इसकी साँसें, मेरी साँसें हैं। ये देखो ये मौजें साँसें ले रही हैं... साँय... साँय... साँय.... ये मौजें नहीं, मेरी साँसें हैं, मेरी आत्मा की साँसें हैं, यह मैं हूँ।"

मर्यूत्का ने चाकू रख दिया।

"तुम तो विद्वानों की भाषा में बातें करते हो। तुम्हारी सभी बातें मेरी समझ में नहीं आतीं। मैं तो सीधे-सादे ढंग से यह कहती हूँ—मैं अब अपने को भाग्यवान अनुभव करती हूँ।"

"शब्द अलग-अलग हैं, मगर भाव एक ही है। अब तो मुझे ऐसा लगता है कि अगर इस बेहूदा गर्म रेत को छोड़कर कहीं न जाया जाये, हमेशा के लिये यहीं रहा जाये, इस फैली हुई गर्म धूप की गर्मी में घुल-मिल जाया जाये, जानवर की तरह सन्तोष का जीवन बिताया जाये, तो कहीं अच्छा हो।"

मर्यूत्का टकटकी बाँधे रेत को देखती रही मानो कोई ज़रूरी बात याद कर रही हो। फिर उसके होंठों पर एक अपराधी की सी कोमल मुस्कान नज़र आई।

"नहीं... बिल्कुल नहीं! मैं तो कभी यहाँ न रहती। आलसी बनकर रहना खटकने लगता है, ऐसे तो आदमी धीरे-धीरे बिल्कुल ढीला हो जाता है। ऐसा भी तो कोई नहीं, जिसके सामने अपनी खुशी जाहिर की जा सके। सभी ओर मुर्दा मछलियाँ हैं। अच्छा हो अगर मछुए जल्द ही मछलियाँ मारने के लिये आ जायें। अरे हाँ, अब तो मार्च खत्म होने वाला है। मैं ज़िन्दा लोगों के बीच जीने के लिये तड़प रही हूँ।"

"तो क्या हम ज़िन्दा लोग नहीं?"

"हाँ, हैं तो! मगर जैसे ही बचा-खुचा सड़ा-सड़ाया आटा एक हफ़्ते बाद खत्म हो जायेगा और जब स्कर्वी हो जायेगी, तब देखूँगी कि तुम कैसा राग अलापोगे? फिर प्यारे, तुम्हें यह भी तो भूलना नहीं चाहिये कि आज तन्दूर से लगकर बैठने का जमाना नहीं है। देखो न, वहाँ हमारे साथी मोर्चा ले रहे हैं, अपना खून बहा रहे हैं। एक-एक आदमी मानी रखता है। ऐसे समय में मैं आराम से बैठकर मजे नहीं उड़ा सकती। बेकार ही तो मैंने फ़ौज में भर्ती होते वक्त कसम नहीं खाई थी।"

लेफ़्टीनेण्ट की आँखों में आश्चर्य की चमक झलक उठी।

"क्या मतलब है तुम्हारा? फिर से फ़ौज में लौटने का इरादा रखती हो?"

"तो और क्या?"

लेफ़्टीनेण्ट दरवाजे की चौखट से तोड़े हुए लकड़ी के एक टुकड़े से चुपचाप खेलता रहा। फिर उसने धीमी धारा की-सी गहरी आवाज़ में कहा :

"अजीब लड़की हो तुम! देखो मर्यूत्का, मैं तुमसे यह कहना चाहता था। मैं तंग आ गया हूँ इस सारी बकवास से! कितने बरस हो गये खून बहते हुए, नफरत की आग जलते हुए। जन्म से ही मैं सिपाही नहीं था। कभी तो मेरी भी इंसान की सी, अच्छी ज़िन्दगी थी। जर्मनी से युद्ध होने के पहले मैं विद्यार्थी था, भाषा और साहित्य पढ़ता था, अपनी प्यारी और विश्वसनीय किताबों की दुनिया में रहता था। ढेरों किताबें थीं मेरे पास। मेरे कमरे की तीन तरफ़ की दीवारें नीचे से ऊपर तक किताबों से अटी पड़ी थीं। उन दिनों कभी-कभी ऐसा होता कि पीटर्सबर्ग में शाम को कुहासा सड़क के राहगीरों को अपने पंजे में दबोच लेता, उन्हें मानो निगल जाता। तब मेरे कमरे में अँगीठी खूब गर्म होती, नीले शेडवाला लैम्प जलता होता। किताब लेकर आराम-कुर्सी में बैठा हुआ मैं अपने को बिल्कुल

ऐसे ही अनुभव करता जैसे कि इस समय—सभी तरह की चिन्ताओं से मुक्त। आत्मा खिल उठती, मन की कलियों के चटकने तक की आवाज़ भी सुनाई देती। वसन्त में बादाम के पेड़ की तरह उसमें फूल खिलते। समझती हो?"

"हुँह..." मर्यूत्का के कान खड़े हो गये थे।

"फिर किस्मत का लिखा वह दिन आया, जब यह सब कुछ खत्म हो गया, टुकड़े-टुकड़े हो गया, तार-तार होकर हवा में उड़ गया... वह दिन मुझे ऐसे याद है मानो कल की ही बात हो। मैं अपने देहाती बँगले के बरामदे में बैठा था और मुझे यह तो याद है कि कोई किताब पढ़ रहा था। सूर्यास्त हो रहा था। सभी ओर लाल रक्त-सा फैला हुआ था। रेलगाड़ी द्वारा पिता शहर से आये। उनके हाथ में अख़बार था, खुद परेशान थे। उन्होंने सिर्फ़ एक शब्द कहा, मगर वह एक शब्द ही पारे की तरह भारी, मौत की तरह भयानक था... युद्ध। यह था वह शब्द—सूर्यास्त की लाली की तरह खूनी। पिता ने और कहा, 'वादीम, तुम्हारे परदादा, दादा और पिता ने देश की पुकार के सम्मुख सदा सिर झुकाया। आशा करता हूँ तुम भी?' पिता की आशा व्यर्थ नहीं हुई। मैंने किताबों से विदा ली। तब मैंने सच्चे दिल से ही ऐसा निर्णय किया था..."

"एकदम हिमाकत!" मर्यूत्का कन्धे झटककर चिल्लाई। "यह तो बिल्कुल वही बात हुई कि अगर मेरा बाप नशे में धुत्त होकर दीवार से अपना सिर दे मारे तो मुझे भी ज़रूर ऐसा ही करना चाहिये? मेरी समझ में यह बात नहीं आती।"

लेफ़्टीनेण्ट ने गहरी साँस ली।

"हाँ... तुम यह नहीं समझ पाओगी। कभी तुम्हें अपनी छाती पर यह बोझ नहीं उठाना पड़ा। कुल का नाम, मान-प्रतिष्ठा, कर्तव्य... हम इसकी बहुत कदर करते थे।"

"तो क्या हुआ? मैं भी अपने दिवंगत पिता को बहुत प्यार करती थी। पर यदि उसका दिमाग चल निकलता तो मेरे लिये उसके कदमों पर चलना ज़रूरी नहीं था। तुम्हें चाहिये था कि उन्हें अँगूठा दिखा देते!"

लेफ़्टीनेण्ट मुँह बनाकर कटुता से मुस्कराया।

"नहीं दिखाया मैंने उन्हें अँगूठा। लड़ाई ने ही मुझे अपने खूनी रास्ते पर घसीट लिया। अपने हाथों से मैंने अपना यह मानवताप्रिय हृदय कूड़े के ढेर में, सार्वभौमिक कब्रिस्तान में दफना दिया। फिर क्रान्ति हुई। मैंने उस पर प्रियतमा की भाँति विश्वास किया... मगर उसने... मैंने अपनी अफसरी के दौरान एक भी सिपाही पर उँगली तक नहीं उठाई। फिर भी मुझे गोमेल स्टेशन पर भगोड़ों ने

पकड़ लिया, मेरे पद-चिन्ह फाड़ डाले, मेरे मुँह पर थूका, चेहरे पर गन्दगी पोत दी। भला क्यों? मैं भागा और उराल जा पहुँचा। मातृभूमि पर मेरा विश्वास तब भी बाकी था। मैं फिर से लड़ने लगा—रौंदी गयी मातृभूमि के लिये, उन फीतों के लिये, जिनका इतना अपमान किया गया था। लड़ा और यह अनुभव किया कि मेरी कोई मातृभूमि नहीं रही, कि मातृभूमि भी क्रान्ति कि भाँति ढोल में पोल है। दोनों ही खून के प्यासे हैं। फीतों के लिये लड़ने में कोई तुक नहीं थी। मुझे याद आई एकमात्र मानवीय वस्तु की—विचार की। मुझे किताबों की याद हो आई। यही चाहता था कि उनके पास लौट जाऊँ, उनसे क्षमा माँगूँ, उन्हीं के साथ रहूँ और मानवजाति को उसकी मातृभूमि, क्रान्ति, उसके रक्तपात के कारण ठोकर मार दूँ।"

"समझी! मतलब यह कि दुनिया टूटकर दो टुकड़े हुई जा रही है, लोग सत्य की तलाश कर रहे हैं, खून बहा रहे हैं और तुम नर्म सोफे पर लेटे हुए किस्से-कहानियाँ पढ़ोगे?"

"मैं नहीं जानता... और जानना भी नहीं चाहता," लेफ़्टीनेण्ट परेशान होकर चिल्लाया और उछलकर खड़ा हो गया। "सिर्फ़ इतना ज़रूर जानता हूँ कि प्रलय की घड़ी नजदीक है। तुमने ठीक ही कहा है कि पृथ्वी टूटकर दो टुकड़े हुई जा रही है। टुकड़े-टुकड़े हुई जा रही है बुढ़िया कहीं की! वह सड़-गल चुकी है, खण्ड-खण्ड हो रही है। वह एकदम खाली है, उसकी सारी दौलत लूटी जा चुकी है। वह इसी खोखलेपन की वजह से खत्म हुई जा रही है। कभी वह जवान थी, लहकती-महकती थी, उसमें बहुत कुछ छिपा पड़ा था। उसमें नये-नये देशों की खोज, अनजाने धन-दौलत को ढूँढ़ पाने का आकर्षण था। वह सब कुछ खत्म हो चुका, उसमें कुछ नया खोजने को बाकी नहीं रहा। आज मानवजाति की सारी समझ-बूझ इसी बात में लगी हुई है कि जो कुछ उसके पास है उसे ही बचाकर रख सके, जैसे-तैसे शताब्दी, वर्ष और घड़ी बीत जाये। तकनीक। मुर्दा गणित। और विचार, जिन्हें गणित ने दिवालिया बना दिया है, ये सभी मानव के विनाश की समस्याओं के समाधान में लगे हुए हैं। अधिक से अधिक लोगों का नाश ज़रूरी है ताकि बाकी लोग अपनी तोदें और जेबें अधिक फुला सकें। भाड़ में जाये यह सब! अपने सत्य के सिवा किसी दूसरे सत्य की मुझे ज़रूरत नहीं। तुम्हारे बोल्शेविकों ने ही भला कौन सा सत्य खोज निकाला है? इंसान की जीती-जागती आत्मा को क्या आर्डर और राशन में नहीं बदल डाला? बस, बहुत हो चुका! मैं इससे भर पाया! अब अपने हाथों पर खून के और धब्बे नहीं लगाना चाहता।"

"दूध के धोये? हाथ पर हाथ धरकर बैठनेवाले? तुम यही चाहते हो न कि तुम्हारी जगह दूसरे लोग रास्ते का कूड़ा-करकट साफ़ करें?"

"हाँ! बेशक करें! जहन्नुम में जाये यह सब! जिन्हें यह पसन्द है वे इस पचड़े में पड़ें। सुनो मर्यूत्का! जैसे ही यहाँ से छुटकारा पायेंगे, सीधे काकेशिया जायेंगे। सुखूमी के करीब मेरा एक छोटा-सा बँगला है। वहाँ पहुँचूगा और किताबें लेकर बैठ जाऊँगा। और बस जहन्नुम में जाये दुनिया! चुपचाप और शान्तिपूर्ण जीवन बिताऊँगा। मुझे अब सत्य की और ज़रूरत नहीं—मैं अमन चाहता हूँ। और तुम पढ़ोगी-लिखोगी। तुम तो पढ़ना चाहती हो न? तुम्हीं तो शिकायत करती हो कि पढ़ नहीं पाईं। लो अब पढ़ना। मैं तुम्हारे लिये सब कुछ करूँगा। तुमने मुझे मौत के मुँह से निकाला है, मैं यह तो नहीं भूल सकता।"

मर्यूत्का उछलकर खड़ी हो गई। तीरों की तरह उसने शब्दों की झड़ी लगा दी :

"तो मैं तुम्हारे शब्दों का यह मतलब समझूँ कि मैं मिठाइयाँ भकोसती रहूँगी, जबकि हर मिठाई पर किसी के खून के धब्बे होंगे? हम रोंयेवाले नर्म-नर्म बिस्तर पर ऊपर-नीचे होते रहेंगे, जबकि दूसरे लोग सत्य के लिये अपना खून बहाते रहेंगे? यही कहना चाहते हो न तुम?"

"तुम ऐसी भद्दी बात क्यों करती हो?" लेफ़्टीनेण्ट ने दुःखी होते हुए कहा।

"भद्दी बात? तुम्हें तो हर चीज़ नर्म-नाजुक चाहिये न, मिसरी की तरह मीठी-मीठी! नहीं, यह नहीं हो सकता! ज़रा सुनो। तुम बोल्शेविकों के सत्य पर नाक-भौं सिकोड़ते हो। कहते हो कि तुम सत्य को जानना नहीं चाहते। मगर उस सत्य को तुमने कभी जाना भी? जानते हो उसका सार-तत्व क्या है? किस तरह लोगों के पसीने और आँसुओं से भीगा हुआ है।"

"नहीं जानता, लेफ़्टीनेण्ट ने बुझी-सी आवाज़ में उत्तर दिया, "मगर मुझे सिर्फ़ यह ज़रूर अजीब-सी बात लगती है कि तुम लड़की होकर ऐसी कठोर, ऐसी उजड्ड हो गई हो कि इस नशे में धुत्त और गन्दे-मन्दे अवारागर्दों के साथ मार-काट में हिस्सा लेना चाहती हो।"

मर्यूत्का ने कूल्हे पर हाथ रख लिये। वह फट पड़ी :

"उनके तन गन्दे हो सकते हैं, मगर तुम्हारी तो आत्मा गन्दी है। मुझे शर्म आती है कि ऐसे आदमी की पकड़ में फँस गई। बहुत कमीने, बहुत बुजदिल हो तुम। 'प्यारी, हम-तुम सुख-चैन से टाँगें फैलाकर बिस्तर पर लेटेंगे..." उसने चिढ़ाते हुए कहा। "दूसरे खून-पसीना एक करके धरती की कालापलट कर रहे हैं, और तुम? तुम कुत्ते के पिल्ले हो!"

लेफ़्टीनेण्ट का चेहरा सुर्ख हो गया। उसके पतले होंठ भिंचकर एक रेखा जैसे बन गये।

"ज़बान को लगाम दो! अपने को भूल रही हो तुम... कमीनी औरत!

मर्यूत्का एक कदम आगे बढ़ी, उसने हाथ उठाया और लेफ़्टीनेण्ट के खूँटियों से भरे, दुबले-पतले से चेहरे पर कसकर तमाचा जड़ दिया।

लेफ़्टीनेण्ट पीछे हटा, वह काँप रहा था और उसकी मुट्ठियाँ कसी हुई थीं। उसने रुक-रुककर कहा :

"खुशकिस्मती समझो कि औरत हो! नफरत करता हूँ तुमसे... नीच कहीं की!"

वह झोंपड़ी में चला गया।

भौचक्की-सी मर्यूत्का अपनी दर्द करती हुई हथेली को देखती रही, फिर उसने हाथ झटका और मानो अपने आप से ही कहा :

"बड़ा आया नवाबजादा! मछली का हैजा!"

दसवाँ अध्याय

**जिसमें लेफ़्टीनेण्ट गोवोरूखा-ओत्रेक
पृथ्वी-ग्रह को हिला देने वाला धमाका
सुनता है और कहानीकार
कहानी के अन्त की
जिम्मेदारी से किनारा कर लेता है**

झगड़ा होने के तीन दिन बाद तक लेफ़्टीनेण्ट और मर्यूत्का के बीच कोई बातचीत न हुई। मगर सुनसान द्वीप पर अलग-अलग रहना सम्भव नहीं था। फिर वसन्त भी आ गया था, सो भी एकदम ही और खासी गर्मी लेकर।

द्वीप को ढकनेवाली बर्फ़ की पतली-सी तह कई दिन पहले ही वसन्त के नन्हे सुनहरे खुरों तले रौंदी जा चुकी थी। सागर के गहरे नीले दर्पण की पृष्ठभूमि में अब तट ने चटक पीला रंग धारण कर लिया था।

दोपहर के समय रेत जलने लगती। उसे छूने से हथेलियाँ जल उठतीं।

सूरज गहरे नीले आकाश में सोने के थाल की तरह घूमता। बसन्ती हवाओं ने उसपर पालिश करके उसे जगमगा दिया था।

धूप, वसन्ती हवाओं और स्कर्वी के सताये हुए उन दोनों लोगों में अब लड़ाई-झगड़ा करने की कोई ताकत नहीं रही।

वे दोनों सुबह से शाम तक रेत पर लेटे रहते, टकटकी बाँधकर उस गहरे नीले दर्पण को देखते रहते, उनकी सूजी हुई आँखें किसी पाल के निशान को ढूँढ़ती रहतीं।

"मैं अब और बर्दाश्त नहीं कर सकती! अगर तीन दिन तक मछुए नहीं आये तो कसम खाकर कहती हूँ कि मैं एक गोली अपने सिर के पार कर दूँगी!" मर्यूत्का ने एक दिन निराश होकर अन्यमनस्क नीले सागर की ओर देखते हुए कहा।

लेफ़्टीनेण्ट ने धीरे से सीटी बजाई।

"मुझे तो कमीना और बुजदिल कहा था और खुद क्या हो! थोड़ा और सब्र करो—सरदार बन जाओगी। तुम्हारा रास्ता बिल्कुल सीधा है—आवारागर्दों के

किसी टोले की सरदार बन जाओगी।"

"तुम फिर क्यों ये बीती हुई बातें ले बैठे हो? वही पुराना पचड़ा! मुझे गुस्सा आ गया था, इसीलिये तुम्हें भला-बुरा कहा था। और उसकी जरूरत भी थी। यह जानकर मेरे दिल को गहरी चोट लगी थी कि तुम बिल्कुल निकम्मे हो, बिल्कुल कायर हो। मुझे दुःख होता है कि तुम ऐसे हो। तुमने तो मेरे दिल में घर कर लिया है, मेरा दिमाग खराब कर डाला है, नीली आँखोंवाले शैतान!"

लेफ़्टीनेण्ट ने ज़ोर का ठहाका लगाया और गर्म रेत पर चित लेटकर हवा में टाँगें लहराने लगा।

"तुम्हारा दिमाग तो नहीं चल निकला?" मर्यूत्का ने कहा।

लेफ़्टीनेण्ट ने फिर ज़ोर का ठहाका लगाया।

"अरे ओ, गूँगे! कुछ बोलता क्यों नहीं!"

लेकिन लेफ़्टीनेण्ट तब तक अपने ठहाके लगाता रहा, जब तक कि मर्यूत्का ने उसकी पसलियों में एक घूँसा नहीं मारा।

लेफ़्टीनेण्ट उठा और उसने हँसी के कारण आँखों में आ जानेवाले आँसुओं की बूँदें साफ़ कीं।

"यह तुम ठहाके किस बात पर लगा रहे हो?"

"खूब लड़की हो तुम, मरीया फिलातोव्ना, किसी को भी इस तरह हँसा सकती हो। मुर्दा भी तुम्हारे साथ नाचने लगेगा!"

"क्यों नहीं? तुम्हारे ख्याल के मुताबिक तो उस लट्टे की तरह भँवर में चक्कर लगाना अच्छा है, जो न एक किनारे हो, न दूसरे? खुद भी चक्कर में रहे और दूसरे को भी चक्कर में डाल दे?"

लेफ़्टीनेण्ट ने फिर से कहकहा लगाया। उसने मर्यूत्का का कन्धा थपथपाया।

"तुम्हारी जय हो, नारियो की महारानी। मेरी प्यारी फ्रायडे! तुमने तो मेरी दुनिया ही बदल डाली, मेरी रगों में अमृत का प्रभाव पैदा कर दिया है। तुम्हारी उपमा के अनुसार मैं अब किसी भँवर में लट्टे की तरह चक्कर नहीं खाना चाहता। मैं खुद महसूस कर रहा हूँ कि अभी किताबों की दुनिया में वापस जाने का वक्त नहीं आया। नहीं, मुझे अभी और जीना है। अपने दाँत और मजबूत करने हैं, भेड़िये की तरह काटते फिरना है ताकि मेरे इर्द-गिर्द के लोग मेरे दाँतों से डर जायें!"

"क्या मतलब? क्या सचमुच तुम्हारी अक्ल ठिकाने आ गई?"

"हाँ, मेरी अक्ल ठिकाने आ गई, प्यारी! ठिकाने आ गई मेरी अक्ल! धन्यवाद,

तुमने कुछ रास्ता दिखा दिया। अगर हम किताबें लेकर बैठ जायेंगे और तुम्हें सारी दुनिया की बागडोर सौंप देंगे तो तुम लोग ऐसा बेड़ा गर्क करोगे कि बस! बिल्कुल बुद्धू हो तुम, मेरी प्यारी। जब दो संस्कृतियों की टक्कर हो रही है तो बात एक किनारे ही होनी चाहिये। जब तक...."

उसने बात बीच में ही छोड़ दी।

उसकी गहरी नीली आँखें क्षितिज पर जमी थीं, उनमें खुशी की चिंगारियाँ नाच रही थीं।

उसने समुद्र की ओर इशारा किया और धीमी तथा काँपती हुई आवाज़ में कहा :

"पाल।"

मर्यूत्का इस तरह उछलकर खड़ी हुई मानो उसमें बिजली दौड़ गई हो। उसने देखा :

दूर, बहुत दूर, क्षितिज की गहरी नीली रेखा पर एक सफ़ेद चिंगारी-सी चमक रही थी, झिलमिला रही थी—एक पाल हवा में लहरा रहा था।

मर्यूत्का ने हथेलियों से अपनी छाती दबा ली। चिर-प्रतीक्षित इस पाल पर विश्वास न करते हुए उसने उस पर आँखें गड़ा दीं।

लेफ़्टीनेण्ट उसकी बगल में आ गया। उसने मर्यूत्का के हाथ पकड़ लिये, खींचकर उन्हें छाती से अलग किया, नाचदे-कूदने लगा और मर्यूत्का को अपने चारों ओर चक्कर देने लगा।

वह नाच रहा था, फटे पतलून में अपनी पतली-पतली टाँगों को ऊपर की ओर उछालता हुआ अपनी कर्णकटु आवाज़ में गा रहा था :

सागर के उस नीले-नीले कुहासे में
श्वेत पाल एकाकी झलक दिखाता है...
नीले-नीले में!.. दिखाता है... है!

"बन्द करो यह बकवास!" मर्यूत्का ने खुशी से हँसते हुए कहा।

"मेरी प्यारी मर्यूत्का! पगली! सुन्दरियों की महारानी! अब जान बचने की सूरत निकल आई! अब हम बच गये!"

"शैतान कहीं का! देखते हो न कि तुम्हें भी इस द्वीप से इंसानों की दुनिया में जाने की प्रबल चाह है!"

"है, प्रबल चाह है! कह तो चुका हूँ मैं तुमसे कि मुझे इसकी बहुत चाह है!"

"ज़रा ठहरो... हमें उन्हें संकेत करना चाहिये। उन्हें इस तरफ़ बुलाना चाहिये!"

"इसकी क्या ज़रूरत है? वे खुद ही इधर आ रहे हैं।"

"और अगर अचानक किसी दूसरे द्वीप की तरफ़ मुड़ गये तो? किर्गिज़ों ने तो कहा था कि यहाँ अनगिनत द्वीप हैं। हो सकता है कि हमारे करीब से निकल जायें। जाओ झोंपड़ी में से एक बन्दूक उठा लाओ!"

लेफ़्टीनेण्ट झपटकर झोंपड़ी में गया। वह बन्दूक को हवा में ऊँचा उछालता हुआ फौरन वापस आया।

"यह खेल बन्द करो!" मर्यूत्का चिल्लाई, "तीन गोलियाँ दाग दो।"

लेफ़्टीनेण्ट ने बन्दूक का कुन्दा कन्धे से लगाया। शीशे की-सी खामोशी को चीरती हुई तीन गोलियाँ चलने की आवाज़ें हवा में गूँज गईं। हर गोली के दगने पर लेफ़्टीनेण्ट लड़खड़ाया। अब उसे इस बात का एहसास हुआ कि वह बहुत कमज़ोर हो गया है।

पाल अब साफ़ नज़र आने लगा था। वह बड़ा, कुछ गुलाबी और पीला था। वह शुभ-शगुन सूचक पक्षी की भाँति पानी में फिसलता-सा चला आ रहा था।

"यह क्या बला है?" नाव को ध्यान से देखते हुए मर्यूत्का बड़बड़ाई, "कैसी नाव है यह? मछुओं की नाव जैसी तो बिल्कुल नहीं। उनसे तो बहुत बड़ी है।"

नाववालों ने गोलियों की आवाज़ सुन ली थी। पाल लहराकर दूसरी ओर झुक गया और नाव मुड़कर सीधे तट की ओर आने लगी

गुलाबी-पीली पाल के नीचे नीले सागर की पृष्ठभूमि में यह नाव काले धब्बे जैसी दिखाई दे रही थी।

"यह नाव तो मत्स्य विभाग के इन्सपेक्टर की सी लगती है। मगर वे आजकल यहाँ किसलिये आये हैं, समझ में नहीं आ रहा," मर्यूत्का धीरे-धीरे बड़बड़ाई।

नाव जब कोई सौ मीटर की दूरी पर रह गई तो वह बाईं ओर को घूमी। उस पर एक आदमी दिखाई दिया। उसने अपने दोनों हाथों को मुँह के सामने किया और ज़ोर से पुकारकर कुछ चिल्लाया।

लेफ़्टीनेण्ट चौकन्ना हुआ। वह आगे की ओर झुका, उसने बन्दूक को रेत पर फेंक दिया और दो ही छलाँगों में पानी तक जा पहुँचा। उसने अपने हाथ फैलाये और खुशी से मस्त होकर चिल्ला उठा :

"हुर्रा! ये तो हमारे आदमी हैं! जल्दी कीजिये श्रीमान! जल्दी कीजिये!"

मर्यूत्का ने अपनी आँखें नाव पर गड़ा दीं। उसे पतवार चलानेवाले व्यक्ति के कन्धों पर सुनहरे फीते झिलमिलाते नज़र आये।

मर्यूत्का एक डरी-सहमी चिड़िया की तरह फड़फड़ाई।

उसके स्मृतिपट पर एक चित्र उभरा :

बर्फ़... नीला पानी... येव्स्युकोव का चेहरा। उसके शब्द : "अगर सफ़ेद गार्डों के हत्थे चढ़ जाओ तो इसे ज़िन्दा उनके हवाले न करना।"

उसने आह भरी, अपने होंठ काटे और झपटकर बन्दूक उठा ली।

वह बदहवास-सी चिल्ला उठी :

"अरे, कम्बख्त अफ़सर! लौट वापस! कहती हूँ... लौट आओ, कम्बख्त!"

लेफ़्टीनेण्ट टखनों तक पानी में खड़ा हुआ हाथ हिलाता रहा।

अचानक उसे अपने पीछे आग और तूफ़ान से चकनाचूर पृथ्वी-ग्रह के फटने का कर्णभेदी धमाका सुनाई दिया। उसकी समझ में कुछ नहीं आया। वह इस मुसीबत से बचने के लिये एक तरफ़ को उछला और टुकड़े-टुकड़े हुई जा रही पृथ्वी का धमाका ही वह आखिरी आवाज़ थी, जो उसने सुनी।

मर्यूत्का बेसुधी में गिरे हुए को देख रही थी। वह अपना बायाँ पाँव अनजाने और अकारण ही ज़मीन पर लगातार पटक रही थी।

लेफ़्टीनेण्ट सिर के बल पानी में जा गिरा। उसके फटे हुए सिर से लाल धारें बह-बहकर समुद्र के दर्पण में घुल-मिल रही थीं।

मर्यूत्का एक कदम आगे बढ़ी, फिर झुकी। वह चीत्कार कर उठी, उसने अपनी वर्दी को फाड़ डाला और बन्दूक गिरा दी।

पानी में गुलाबी रंग के कोमल धागे के साथ लटकी हुई आँख तैर रही थी। उसमें आश्चर्य और दुख की झलक थी। समुद्र-सी नीली आँखें मर्यूत्का को देख रही थीं।

वह घुटनों के बल पानी में गिर पड़ी। उसने बेजान और विकृत सिर को उठाने की कोशिश की और अचानक लाश पर ढह पड़ी। वह तड़पने लगी, उसने अपना चेहरा खून से लथपथ कर लिया और दुखभरी आवाज़ में चिल्लाने लगी :

"मेरे प्यारे! यह क्या कर डाला मैंने? आँखें खोलो! मेरी तरफ़ देखो मेरे प्यारे! अरे ओ, नीली आँखोंवाले!"

नाव में तट पर पहुँचे हुए लोग उन्हें ऐसे देख रहे थे मानो उन्हें काठ मार गया हो।